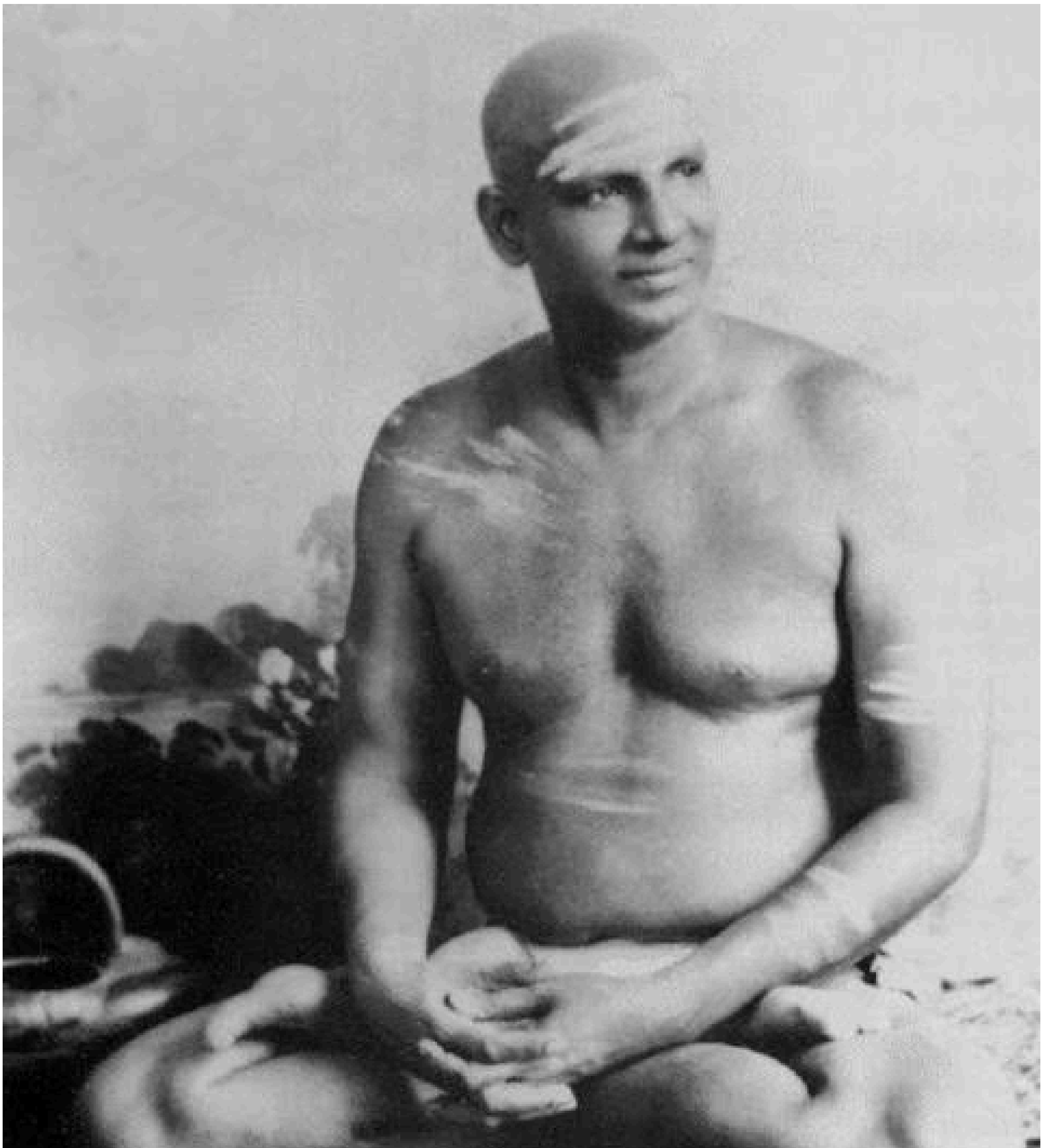
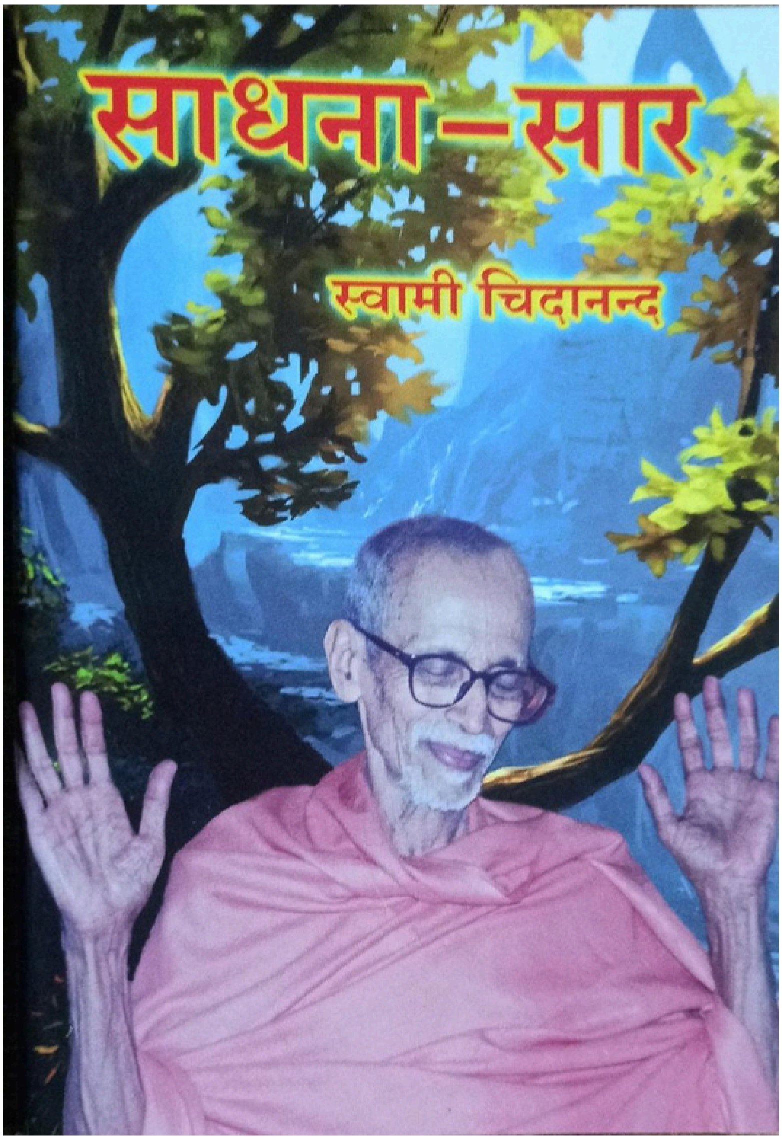





# साधना-सार

प्रवक्ता

# श्री स्वामी चिदानन्द

संकलनकार

श्री प्रफुल्लकुमार महापात्र

सम्पादक

श्री स्वामी रामराज्यम् सरस्वती

प्रकाशक

द चिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : चशवानन्दनगर-२४९१९२

चिला : चटहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड(चहमालय),भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण:१९९५

चितीय संस्करण:२००७

तृतीय संस्करण:२०१६

(५०० प्रचतयाँ)



ISBN 81-7052-112-2HC47

PRICE: 35/-

'द चिवाइन लाइफ सोसायटी चशवा,नन्दनगर' के चलए
स्वामी पद्मनाभानन्द िारा प्रकाचशत तथा उन्ीं ं के िारा
'योग-वेदान्त फारेस्ट एकिोमी प्रे्स, पत्रालय : चशवानन्दनगर,
चिला : चटहरीगढ़वाल,उत्तराखण्ड,चपन:२४९१९२'मेंमुचित।
For onlineordersandCataloguevisit:dlsbooks.org

# प्रकाशकीय

पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द िी महारि िारा समय-समय पर उडीसा प्रान्त के साधकों ंमें चवतररत चकये गये उपदेशामृत के कुछ अंशों ंको एकत्र करके इस पुस्तक के माध्यम से अध्यात्म-गित् को उपलब्ध कराया गया है।

पुस्तक की चवषय-सामग्री साधकों ंको िागरूक साधक बनाती, उनकी साधना को यन्त्रवत् होने से बिाती तथा साधना-सम्बन्धी ऊपर से सामान्य-सी चदखलायी पडने वाली, परनुतु वसुतुतः गम्भीर समस्याओं ंके प्रचत उनका ध्यान आकचषित करती है।

आशा है, पाठक इस उपदेशामृत का पान करके अपने साधना-मागि की समस्याओं ंका समाधान ढूाँढ़ सकेंगे और अपने आध्यात्मत्मक क्रमचवकास की गचत में तेिी ला सकेंगे।

-दचिवाइन लाइफ सोसायटी

# प्रस्तावना

हममें यह कौतूहल बना रहता है चक सद्गुरुदेव ब्रह्मलीन श्री स्वामी चशवानन्द िी महारिा प्रत्येक को संन्यास दे देते थे। कोई सूकूल का लडका हो या कोई गााँव का चकसान हो, कोई अमीर हो या कोई गरीब हो- सबको संन्यास दे देते थे। संन्यास लेने के चलए चकसी से चसफाररश लाने की िरूरत नहीं ंपडती थी।

उपयुिक्त कथन पर अचधक प्रकाश िालते हुए प्रातःस्मरणीय परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द िी महारिा ने यह भी बताया चक उनका संन्यास बहुत ऊाँिा था। उन्ें इस अचनत्य संसार की अच्छी अनुभूचत थी। उन्ोंनें मलेचशया में िाक्टरी सेवा की। वहााँ पर उन्ोंनें िीवन के वास्तचवक नग्न स्वरूप को देखा। बार-बार उन्ें लोगों ंिारा भोगे िा रहे क्लेशों ंको देखने का अवसर चमला। िैसे चक बुद्ध भगवान् के अन्दर वैराग्य का उदय हुआ, वैसे ही उनके अन्दर भी वैराग्य का उदय हुआ। उन्ोंनें िाक्टरी सेवा को हेय समझा। सब-कुछ पररत्याग करके सविसंग-पररत्यागी हो कर यचत, संन्यासी का वेश वरण करने के हेतु वे भारत लौटे। चहमालय की गोद में पुण्य-प्रदाचयनी गंगा िी के चकनारे कठोर तपस्या की। उनमें चदव्य ज्ञान का उदय हुआ। उन्ोंनें देखा चक इन बाह्य क्षचणक सुखोपभोग से परे प्रत्येक मानव िारा साध्य एक ऐसी चदव्य अनुभूचत है, चिसकी प्राप्ति के चलए मानव ने िन्म चलया है और चिसकी प्राप्ति से उसमें कोई कमी नहीं ंरहती, सभी दुःखों ंकी चनवृचत्त होती है, िीवन धन्य होता है और वह मानव से माधव बन िाता है। इसचलए िो सुखानुभूचत हमें हुई है, उसकी अनुभूचत प्रत्येक को होनी िाचहए। उनके संन्यास के पीछे यह उदात्त भाव था।

मैंने भी चिस समय सद्गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द िी महारिा की मुख-चनःसृत वाणी को सुनने का सौभाग्य प्राि चकया, तो उसी समय से मुझमें भी यह धारणा बलवती बनी रही चक सद्गुरुदेव के वाणी-श्रवण से चिस सुखानुभूचत को, चिस अहैतुक आनन्द को, चिस िैतनता को, चिस मागि-दशिन को प्राि करके हम ओत-प्रोत, आनन्द-चवभोर हो िाते हैं, उसे चलचपबद्ध करके पहले स्वयं उसका आनन्द उठायें तथा उसे अपने िीवन में उतार कर िीवन को साथिक बनायें। साथ ही उसे प्रत्येक चिज्ञासु, मुमुकुषु, भगवद्-प्ेरेमी तथा चदव्य िीवन-प्ेरेमी भक्त, चशष्य, साधक और सत्ंसंगी तक पहुाँिायें, चिससे चक वह इससे लाभाप्तित हो। इसी अचभलाषा ने ही मुझे इस कायि की ओर प्रवृत्त चकया।

अपनी स्वल्प बुप्तद्ध से इस चंकंकर ने इन प्रविनों ंको चलचपबद्ध करने की िेष्टा की है। इस महत्-कायि में चिन्ोंनें प्रोत्साहन चदया, संशोचधत प्रचत को चलखा और टाइप चकया तथा चिस दम्पचत ने मुझे बार-बार प्रोत्साचहत करने के साथ-साथ मागि दशािया और कैसेट भी चदये, उन सबके प्रचत मैं चवशेष रूप से कृतज्ञ हाँ। सद्गुरुदेव की कृपा हमेशा उन सब पर बनी रहे, इतना ही इस चंकंकर का गुरुिरणारचवन्द में चनवेदन है।

मैं सभी गुरु िनों,ं सन्तों,ं महानुभावों ंसे आशीविाद-यािना करने के साथ-साथ सद्गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द िी महारिा-चिनकी पुण्य-सूमृचत आद्यन्त बनी रही और मुझे इस पावन कायि सम्पादन में पे्ररणा प्रदान करती रही-के श्रीरणारचवन्द में कोचट प्रणचत समचपित करके अपनी सभी धृष्टताओं ंकी क्षमा-प्राथिना के साथ चवराम लेता हाँ।

हरर ॐ तत्सत्!

**-प्रफुल्लकुमार महापात्र**

# अनुक्रमणिका

# १. गृहस्थ–िीवन में साधना

गृहस्थों ंको ज्यादा समय अपने उद्योग में, व्यापार में तथा नौकरी–िाकरी में व्यतीत करना पडता है। उन्हें अथोर्पािन के चलए अचधक कमि करना पडता है। वानप्रस्थी और संन्यासी घण्टों ंबैठ कर िप कर सकते हैं, पुरश्चरण कर सकते हैं, प्राणायाम कर सकते हैं तथा ध्यान लगा सकते हैं; परन्तु गृहस्थों ंके चलए यह असम्भव है, अतः उन्हें चनरन्तर मानचसक िप करना पडेगा। उन्हें चनरन्तर भगवत्स्मरण बनाये रखना होगा। खाते-पीते, सोते–िागते, घर में या बाहर-प्रत्येक प्रकार की त्मस्थचत में, हर स्थान में और हर समय में तथा हर तरह का कायि करते हुए स्मरण-साधना को उन्हें बनाये रखना होगा। उन्हें चवचभन्न प्रकार के पाररवाररक कमि करते हुए चवश्वात्म-भाव भी बनाये रखना होगा अथाित् चवश्व के प्रत्येक पदाथि तथा प्राणी में भगवान् के दशिन करने होंगें। साथ ही, मानचसक िप तथा सुचमरण-साधना के ऊपर भी िोर देना पडेगा। मानचसक िप के िारा सारे कमि करते हुए दृढ़ भगवत्स्मरण हो सकता है। यचद ऐसा नहीं ंहो सका, तो िीवन व्यथि िला ियेगा।

आप दफ्तर िाते हैं, तो क्या सुचमरण नहीं ंरख सकते? आप व्यापार करते हैं, तो क्या सुचमरण नहीं ंरख सकते ? आप और चकसी िगह िाते हैं, तो क्या सुचमरण नहीं ंरख सकते? यह तो दूध में िीनी चमला लेने के समान है। अिुिन से भगवान् बोले- “मेरा स्मरण रखो और युद्ध करो।" अरे, युद्ध-क्षेत्र में िो आदमी युद्ध करता है, उसे अपना पूरा-का-पूरा मन युद्ध में ही लगाना पडता है। यचद वह सिेत नहीं ंरहेगा, तो उसे अपने प्राणों ंसे हाथ धोना पडेगा। युद्ध–िैसी त्मस्थचत में भी भगवान् िाहते हैं चक मन उन्हीं ंमें लगा रहे। यह असम्भव नहीं ंहै। यचद असम्भव होता, तो भगवान् ऐसा कहते ही नहीं। ंयचद युद्ध-क्षेत्र में ऐसा सम्भव है, तो अन्य क्षेत्रों ंमें भी सम्भव है। अतः प्रत्येक स्थान और पररत्मस्थचत में उनका स्मरण सम्भव है।

लोग कहते हैं चक भगवान् का स्मरण नहीं ंहो सकता है। यचद आपके मन में ऐसी भावना है, तब आप अपने-आपको भगवद्-भक्त और साधक मानना ही छोड दें। िो भगवान् का स्मरण नहीं ंकर सकता, वह साधक नहीं ंहै, भक्त नहीं ंहै। यचद आप साधक हैं, भगवद्-भक्त हैं, तो आपको सुचमरण करना ही पडेगा।

रामकृष्ण परमहंस कहा करते थे चक बडे-बडे शहरों ंमें अमीर और िमीदंार लोग होते हैं। उनके पररवार में िो महत्त्वपूणि व्यत्मक्त होते हैं, उन्ें बहुत-से काम करने पडते हैं। वे बहुधा व्यस्त रहते हैं। इसचलए वे अपने बच्ों ंकी देखभाल स्वयं नहीं ंकर पाते। बच्ों ंके चलए वे धाय रख लेते हैं। धाय उस बच्े को त्मखलाती है, सुलाती है, कपडे पहनाती है आचद-आचद। चफर भी उसका मन उस बच्े में नहीं ंलगा रहता। अपने घर में उसका अपना बच्ा है। उसका मन उसी में लगा रहता है। वह माचलक के बच्े को अपना-अपना कहती है; चकनु्त उसका मन उसमें नहीं ंरहता। उसका मन उसके अपने बच्े में लगा रहता है। इसी प्रकार से चकसी भी पररत्मस्थचत में रहें, आपके िो अपने भगवान् हैं, उनका स्मरण आप करते रह सकते हैं। मैं गृहस्थाश्रम में हाँ, ऐसा सोिना ही गलत है। ऐसी धारणा आपके अन्दर होनी िाचहए चक मैं साधक हाँ, मैं भगवद्-भक्त हाँ। मुझे साधना करनी ही िाचहए। मैं भक्त हाँ, इसचलए मेरे अन्दर भगवद्-भत्मक्त चनरन्तर उपत्मस्थत रहनी ही िाचहए। वह िो अिर, अमर, अचवनाशी, नाम-रूप से परे, िन्म-मृतु्य से रचहत आत्म-तत्त्व है, वह सबके चलए एक-सा है। मैं कोई भी हाँ, गृहस्थ हाँ या ब्रह्मिारी—सविप्रथम मैं साधक हाँ और मुझे इस तत्त्व को िानना है। मैं गृहस्थ हाँ, ऐसी गलत भावना को समाि कर देना िाचहए। मैं साधक हाँ — अपने चवषय में यही सोिना िाचहए। िब आप अपने को साधक समझने लगेंगे, तब आप साधना की आवश्यकता को अनुभव करने लगेंगे। यह आवश्यकता साधना का मागि प्रशस्त करेगी।

स्वामी चशवानन्द िी भी कहा करते थे चक पूणि साधक अपना पूरा समय आसन, प्राणायाम, ध्यान आचद के चलए दे सकता है, उसकी तुलना में गृहस्थ अपनी चदनियाि में इन सबके चलए उतना समय नहीं ंदे सकता। इसचलए गृहस्थों ंको स्मरण तथा मानचसक िप की साधना को अपनाना िाचहए। उन्ें अपना प्रते्यक कमि करते हुए सोिना िाचहए- 'मैं तो साधना कर रहा हाँ, मेरा कमि-सम्पादन भगवान् की आराधना ही है।' कतिव्य कमि करते हुए उन्ें अपने समस्त कमों को भगवान् के िरणों ंमें अचपित कर देना िाचहए। साथ ही, चनरन्तर भगवान् का स्मरण भी करते रहना िाचहए। हमेशा भगवन्नाम को मन में रखना ही होगा। मानचसक िप के रूप में चनरन्तर भगवत्स्मरण को बनाये रखना ही होगा।

इस साधना के अन्तगित प्रात:काल उठते ही भगवान् की आराधना और भगवन्नामि–प से अपना चदवस प्रारम्भ करना होगा। इसी प्रकार चदन-भर का कायि समाि करने के बाद ध्यान, प्राथिना आचद को चबना िूके हुए करना ही पडेगा। इसे करने के चलए एक उपाय है : प्रातः ध्यान-प्राथिना आचद चकये चबना हम प्रातःकाल का नाश्ता नहीं ंलेंगे। मन को ऐसे समझायें : साधना नहीं, ं तो नाश्ता नहीं। ं इसी प्रकार, सायंकाल की साधना नहीं, ं तो रात का भोिन नहीं। ं सायंकालीन साधना में घण्ा-आधा घण्ा व्यतीत करने के बाद ही राचत्र का भोिन करने के हम अचधकारी हैं। हमें इसी प्रकार के चनयम बनाने होंगें। यह साधना-मागि को अपनाने का पक्का तरीका है। आप एक अन्य तरीके को भी अपना सकते हैं। िब प्रातःकाल की साधना नहीं, ं तो अपने ऊपर पिास पैसे का िुरमाना और सायंकाल की साधना नहीं, ं तो भी पिास पैसे का िुरमाना। ये पैसे एक चिब्बे में िालें। पिास पैसे तो संकेत मात्र हैं। िो धनवान् हैं, उन्ें अपने

ऊपर अचधक धन का ुिरमाना करना ािचहए। इस प्रकार मन थोडे ही चदनों ंमें रास्ते पर आ
ायिेगा। मन ही शैतान है। इसे ही मनाने की बात है। इसचलए यह ाे तरीका है, इसे आप अपनायें।

महात्मा गान्धी का ािवन चितना व्यस्त था, उतना व्यस्त आपका ािवन नहीं ंहै। सामाचिक
काथि, रािनैचतक काथि, देश-भ्रमण, पत्र-व्यवहार, सत्याग्रह आचद न ािने चकतने प्रकार के काथि उन्ें करने पडते थे।
अपने व्यस्त ािवन में भी गान्धी ाि प्रातःकाल आधा-पौना घण्टा प्राथिना करके
ही अपने दैचनक काथि प्रारम्भ करते थे और सूथिास्त होते ही वह चकसी दूसरे लोक में पहुँाँ ािते
थे-प्राथिना के लोक में। तब वह अन्तमुिखी हो ािते थे। वह गीता के चितीय अध्याय में वचणित
त्मस्थतप्रज्ञ के लक्षण सुनते थे, ध्यान-भिन करते थे। यह कैसे सम्भव हो पाया? िब उनके ि-ैसे
व्यस्त व्यत्मक्त भी प्रातः और सायंकाल ध्यान, प्राथिना, भिन आचद कर सकते थे, तब हम कैसे
कह सकते हैं चक हमारे चलए यह सम्भव नहीं ंहै।

एक चवदेशी लेखक की छोटी-सी-पुस्तक है : 'How to Live Twenty-four Hours
a Day' अथिात् 'सम्यक् ढंग से चदन के ाौबीस घण्टे कैसे व्यतीत करें?' इन ाौबीस घण्टों ंमें
हमारे कई घण्टे बेकार ािले ािते हैं। हम चकन-चकन कायों में अपने घण्टे बरबाद कर देते हैं,
इसकी एक सूाी स्वामी चशवानन्द ाि ने प्रस्तुत की है:

**How can you get real peace of mind,**
**If you waste your time in idle gossiping,**
**In backbiting, in fights, quarrels,**
**In cinemas, restaurants, in cards and smoking,**
**In novels and newspapers...?**

अथिात् गपशप करने, पीठ पीछे चनन्दा करने, लडाई-झगडा करने, चसनेमा और होटलों ंमें
ािने, ताश खेलने, धूम्रपान करने, उपन्यास-समााारपत्र आचद पढ़ने में हम अपना समय बरबाद
कर देते हैं। मान लीचिए, नाश्ता आचद करके आप अखबार देखने लग ािते हैं, दुचनया भर की
बातें ाान कर आपको क्या चमल रहा है? आपने दुचनया की बेकार बातों ंमें मन लगाया, लेचकन भगवान् में मन नहीं
ंलगाया। आप कहेंगे-'अरे, काफी दे दो। ािल्दी दे दो। अभी हमें ाना है।' चकस बात की ािल्दी होती है? चमत्रों ंके
साथ ताश खेलने की। घर के अन्य आवश्यक कायों को
भी करना है; परन्तु ताश खेलना आवश्यक है। इससे बढ़ कर मूखिता क्या हो सकती है? यह
महापाप है। भगवान् ाारा चदये गये अमूल्य हीरे ि-ैसे मानव ि-न्म को बरबाद कर रहे हैं हम ।
समय को बरबाद कर रहे हैं। आयु को बरबाद कर रहे हैं। यह साधक का लक्षण नहीं ंहै। यह भक्त का लक्षण नहीं ंहै।
मैंने देखा है चक मुम्बई में दूर-दूर से लोग चवद्युत् टेरन में आते ि-ाते हैं।
टेरन में आधा घण्टे, ाालीस चमनट का समय तो व्यतीत करना ही पडता है। अचधकांश यात्री
अपनी-अपनी टोली बना लेते हैं और ताश खेलने लग ािते हैं। भगवान् ने चकतना अमूल्य समय
चदया है! इस समय को ठीक से व्यतीत करना है। सोंा, उस समय में िप क्यों ंनहीं ंकरना है? भगवच्चिन्तन क्यों ंनहीं
ंकरनी है? मानचसक िप क्यों ंनहीं ंकरना है? हम इस प्रकार बरबाद करते हैं
अपना समय।

सन् १९४५ की बात है। गुरु महाराि का एक छोटा-सा चिचकत्सालय था। िब उन्होंनें
चिचकत्सालय के काम में मेरी रुचि देखी, तब उन्होंनें मुझे भी उसमें सेवा करने का मौका दे
चदया। इसका पररणाम यह हुआ चक आस-पास के लोगों ंसे, ाो वहाँ इलाि करवाने के चलए आते

थे, मेरा पररिय हो गया। उन चदनों ंयह सेवक ऊपर के एक कमरे में रहता था। निी गंगाचकनारे हनुमान् िी का मत्मन्दर है। उस मत्मन्दर के एक छोटे कमरे में मध्य प्रदेश की एक माई िी रहा करती थी। वह कृष्ण-भक्त थी। वह चदन-भर भिन करती रहती थी। वह कभी-कभी अपनी दैचनक आवश्यकता की वसुतुएँ माँगने के चलए मेरे कमरे में आ िाती थी। दो–िार चमनट बातें करने के बाद वह तुरन्त अपने कमरे में िाने के चलए उठ खडी होती थी। कहती थी- "मेरे भिन का
नुकसान हो रहा है। मैं िलती हाँ।" मैं कहता - "बैठो, मैं अभी तुम्हारी िीिें माँगाये देता हाँ।"
वह रुकती नहीं ंथी। बस, यह कहती हुई िली िाती-"मेरे भिन का नुकसान हो रहा है।" भिन में उसकी इतनी लगन थी! देखें, यचद गृहस्थ भी इसी प्रकार सोिने लगें, तो चकसी भी समय के चकसी भी चहसे्से को भिन में लगाया िा सकता है। भिन करने या स्मरण करने की ऐसी तीव्र आकांक्षा हो, तो गृहस्थ साधक साधना-मागि में आगे बढ़ सकता है। गृहस्थ का मुख्य कतिव्य है भिन । गृहस्थाश्रम में रहने वाले साधकों ंको भगवद्गीता के दशवें और ग्यारहवें अध्यायों ंका बार-बार स्वाध्याय करने के चलए कृष्ण िी ने चनदेश चदया है। इन अध्यायों ंपर बार-बार मनन करके उसे भगवान् के चवचवध रूपों ंतथा उनके सविव्यापकत्व का भली प्रकार से बोध प्रा हो सकेगा और तब यह बोध उसके िीवन के समस्त कायिकलापों ंको आवृत कर लेगा। उसका िीवन साधारण िीवन नहीं ंरह िायेगा। उसके िीवन की गुणवत्ता की सुगन्ध से अन्य गृहस्थों ंके िीवन भीमहक उठेंगे।

# २. वैराग्य

भगवान् ने गीता में कहा है चक यह संसार दु:खालय है। सृचष्ट की चकसी भी वसुतु अथवा पदाथि में सुख नहीं ंहै, उससे थोडा सुख चमलेगा; परनुतु चितनी मात्रा में सुख चमला, उससे िौगुनी मात्रा में दु:ख भी चमलेगा। सुख के साथ-साथ दु:ख भी आता है। इसचलए ऐसे सुख से क्या लाभ है? िो चववेकी है, वह इस बात को अच्छी तरह से समझ कर इन वसुतुओं ंके प्रचत अपनी आसत्मक्त को समाि कर देता है।

प्रते्येक िीवात्मा की एक सहि प्रवृचत्त है-राग या आसत्मक्त । राग िेष का दूसरा पहलू है। िेष माने हम चकसी वसुतु को नहीं ंिाहते हैं। राग माने हम उसे िाहते हैं। इस राग को छोड देने, इस राग को समाि कर देने अथवा इस राग को अपने स्वभाव से चनकाल देने का पररणाम है चवराग। चवराग है राग के अभाव की अवस्था ।

बि तक हमारे अन्दर वैराग्य नहीं ंहोगा, तब तक हम इस माया के पाश से मुक्त नहीं ं हो सकते। प्रते्येक िीि हमें आकचषित करती रहेगी। कभी हम इस तरफ, कभी उस तरफ खीिें

िाते रहेंगे। हमारा कोई स्वतन्त्र अत्मस्तत्व नहीं ंरह िायेगा। हम प्रचतचक्रयाओं ंका समूह बन िायेंगे अथिात् प्रत्येक वसुतु के प्रचत अपनी प्रचतचक्रया व्यक्त करेंगे। इस माया के बािार में िो कोई वसुतु हम देखेंगे, उससे प्रभाचवत हो िायेंगे। िैसे कोई बच्ा बािार में िा कर िो भी िीि उसे चदखलायी पड िाती है, उसके प्रचत उतुसुक हो िाता है। वह चमठाई की दुकान देखता है, उसके प्रचत आकचषित हो िाता है। त्मखलौने चदखलायी पडते हैं, उन्ें लेने के चलए उतुसुक हो िाता है।
उसका मन त्मस्थर नहीं ंहोता। राग में फाँस कर हम उस बचे् की तरह हो िाते हैं। माया के प्रपंि के आकषिण में, नाम-रूप के आकषिण में फाँस कर हम कभी इस तरफ, कभी उस तरफ िोलते रहते हैं। मन में हमेशा व्याकुलता बनी रहती है। हमारा मन बन्दर-िैसा हो िाता है। वह
कभी इस तरफ, कभी उस तरफ भागता रहता है—एक क्षण के चलए भी त्मस्थर हो कर नहीं ंरहता।
राग से िंिलता आती है, अशात्मन्त चमलती है।

यचद शात्मन्त िाचहए, तो राग का त्याग करना होगा; वैराग्य की स्थायी भावदशा में संत्मस्थत होना होगा। भावुकतावश वैराग्य के प्रभाव में आ िाने से बात नहीं ंबनेगी। चकसी सम्बन्धी या चमत्र की मृतुयु हो गयी। श्मशान घाट में शरीर को िलते हुए देखा। उस घटना से वैराग्य का उदय हो गया। कल चिसके साथ हाँसे-बोले, आि वह िला गया। बस, तीथि-स्थान को भाग गये। भस्म लगा ली। ऐसा वैराग्य स्थायी नहीं ंहोता। यह वैराग्य हमारे काम का नहीं ंहै। िब स्वाध्याय करके, साधु-सन्तों ंका सत्संग करके, चिन्तन-मनन करके हमारे अन्दर वैराग्य उदय होता है, तब वह स्थायी वैराग्य होता है। यह चववेक से उत्पन्न वैराग्य कहलाता है।

वैराग्य माने राग से चनवृचत्त। मानव का स्वभाव है- दोष-दशिन करना। दोष-दशिन चकन वसुतुओं ंमें करना िाचहए ? िन्म, मृतुयु, िरा, व्याचध, सुख और भोग में। तब पता िलता है चक यह सांसाररक प्रपंि तो आग के समान है। इसमें सुख कहाँ है? शात्मन्त कहाँ है? सवि दु:खमय है। तब हमारे अन्दर सहि रूप में वैराग्य आने लगता है। यह वैराग्य स्थायी वैराग्य बन िाता है।

शंकरािायि ने कहा-घास के तृण से ले कर ब्रह्म-पद के सुख को भी िो कौए की चवष्ठा-िैसा समझता है, वही वैराग्य के गुण से युक्त है। काकचवष्ठावत् भावना-यह सचे् वैराग्य का स्वरूप है। आध्यात्मत्मक िीवन की दृढ़ आधारचशला है वैराग्य। ऐसे वैराग्य से ही हमारा आध्यात्मत्मक िीवन सुरचक्षत रह सकेगा। नहीं ंतो, थोडा भी प्रलोभन आने से हमारा पतन हो िायेगा।

वैराग्य एक दैवी सम्पदा है। भगवान् के प्रमुख छह गुणों ंमें वैराग्य एक गुण है।

हमें वैराग्य की भावना का चवकास करने वाले ग्रन्ों ंको पढ़ना िाचहए-यथा भतृिहरर का 'वैराग्य-शतक' । इस सांसाररक प्रपंि का िो सच्ा दु:खमय स्वरूप है, उसके ऊपर खूब चिन्तन-मनन भी करना िाचहए। इससे वैराग्य उत्पन्न होता है।

# ३. भगवन्नाम-साधना

िीवात्मा अपने चकये हुए कमों का फल भोगने के चलए शरीर ले कर इस भू-लोक पर आती है। कमि और कमिफल-भोग का ि चिवश्वात्मक शासन है, इस शासन के कारण भोग करने के चलए वह यहााँ आती है। शुभ कमों के चलए सुख का भोग और अशुभ कमों के चलए दु:ख का
भोग करती है। िो कमि शुभ नहीं ंहै और अशुभ भी नहीं ंहै, उसके चलए साधारण अनुभवों ंका
भोग चकया िाता है।

इस दृश्य िगत् का प्रपंि स्थूल और व्यक्त है। भगवान् अगोिर हैं, इत्मियों ंसे परे हैं,
मन और बुत्मद्ध से भी परे हैं, सूक्ष्माचतसूक्ष्म और अव्यक्त हैं, अदृश्य हैं, अप्रकट हैं। भगवत्-तत्त्व
अप्राकृचतक है। प्रकृचत के अन्दर नहीं ंहै। यद्यचप यह तत्त्व उस दृश्य प्रपंि से ओत-प्रोत है, चफर
भी इसका और उस प्रपंि का कोई मेल नहीं ंहै। िैसे चकसी बडे पात्र में िल िाल कर रखें और
उसमें तेल भी िालें। दोनों ंएक ही स्थान में होते हुए भी अचमचश्रत रहेंगे; क्योंचक उन दोनों ंकी
प्रकृचत ही अलग है। इसचलए भगवान् उस प्रपंि से ओत-प्रोत होते हुए भी उस (प्रपंि) के कलंक
से अछूते रहते हैं। वह हवा के समान हैं। हवा दुगिन्ध और सुगन्ध से भरे स्थान से हो कर बहती
है; परन्तु उस पर सुगन्ध-दुगिन्ध का कोई प्रभाव नहीं ंपडता। इसी प्रकार भगवत्-तत्त्व इस दृश्य
प्रपंि से ओत-प्रोत रहते हुए भी उससे अप्रभाचवत रहता है। दृश्य प्रपंि व्यक्त है; भगवत्-तत्त्व
अव्यक्त है। प्रपंि दृश्य है और भगवत्-तत्त्व अदृश्य है। दोनों ंमें आकाश-पाताल का अन्तर है।

हमारी समस्या यह है चक यह िीवात्मा स्थूल िगत् में उतरी हुई है। वह शुभाशुभ कमि के
सुख-दु:खाचद भोगने के चलए यहााँ आयी है। उसे इस िगत् के प्रपंि में ही रहना है। लेचकन
उसका परम लक्ष्य परमाथि है। चकन्तु परमाथि अप्रकट, अव्यक्त, सूक्ष्माचतसूक्ष्म तथा अदृश्य भगवत्-
तत्त्व है। इस दृश्य प्रपंि के बीि रहते हुए िीवात्मा को भगवत्-तत्त्व तक पहुाँिना है। अब इसमें
और उस तत्त्व में चकस प्रकार सम्बन्ध स्थाचपत हो सकता है? कोई ऐसी िीि होनी िाचहए चिसका
दोनों ंमें प्रवेश हो, दोनों ंके साथ चिसका सम्बन्ध हो, िो उस अप्रकट अव्यक्त परात्पर तत्त्व का
अंश हो और इस दृश्य प्रपंि का भी अंश हो। वह ऐसी वस्तु हो िो प्रकट हो, चफर भी अव्यक्त
और अदृश्य हो। ऐसी वस्तु को कहते हैं-मन्त्र या भगवन्नाम।

ि नाम उच्चाररत चकया िाता है, वह एक शब्द (नाद) है। इसे हम अपनी स्थूल
कणेत्मिय से सुन सकते हैं। इस स्थूल चिह्वा से हम उसका उच्चारण कर सकते हैं। लेचकन इस
शब्द की क्या आकृचत है? शब्द को हम पकड नहीं ंसकते हैं; इसे हम स्पशि नहीं ंकर सकते हैं।
यह प्रकट होते हए भी अस्पश्यि है। शब्द को हम देख नहीं ंसकते हैं। यह अदृश्य है। यह शब्द
व्यक्त िगत् के स्थूल प्रपंि से सम्बन्ध रखता है और भगवत्-तत्त्व का भी अंश है। शब्द व्यक्त

होते हुए भी अव्यक्त है। इसचलए यह स्थूल है और सूक्ष्म भी। यह प्रपंिऔर परमाथि-दोनों ंसे सम्बद्ध है। परमाथि से सम्बद्ध होने के कारण यह चदव्य शत्मक्त से सम्पन्न है। यह िैतन्य-स्वरूप है।

शब्द या भगवन्नाम या मन्त्र का तात्मत्त्वक, सूक्ष्म तथा िैतन्य-स्वरूप है। यह चदव्य है। यह चदव्य शत्मक्तयों ंसे पररपूररत है। यह भगवान् ही है; क्योंचंक यह भगवान् का नाम है और नाम तथा नामी में अभेद होता है। अत: यह इस स्थूल प्रकट िगत् और उस अप्रकट, अव्यक्त, अदृश्य, सूक्ष्माचतसूक्ष्म ब्रह्म-तत्त्व के बीि का एक सेतु है। यह प्रपंिऔर परमाथि के बीि की एक कडी है। यह मृतुयुमय िगत् और अमर मोक्ष के पद के बीि का संयोिक है। इसचलए िब हम इस भगवन्नाम या शब्द या मन्त्र के िप का अभ्यास करते हैं, तब इसके प्रभाव या शत्मक्त से हमारी िेतना, िो शरीर में बद्ध है, अपने बन्धन से मुक्त हो करके शरीर, मन और बुत्मद्ध की उपाचधयों ं का अचतक्रमण करके भगवत्-तत्त्व से िुड िाती है। मन्त्र की शत्मक्त को मन्त्र के िप से सचक्रय बनाया िाता है। हम चितना ही अचधक िप करते हैं, मन्त्र-शत्मक्त उतनी ही िाग्रत होती िाती है। पुरश्चरण, अनुष्ठान, अखण्ड नाम-स्मरण तथा चलत्मखतिप के िारा यह शत्मक्त सचक्रय होती है। चनरन्तर नामिप करते-करते ऐसी अवस्था भी आती है, िब नाम इतना चक्रयाशील हो िाता है चक वही आपका पथ-प्रदशिक बन िाता है। भगवन्नाम की शत्मक्त के िारा ही हम परमाथि के साथ सम्बन्ध स्थाचपत कर सकते हैं और प्रपंिसे चनकल कर परमाथि तक पहुाँिसकते हैं। मन्त्र-दीक्षा लेने का उद्देश्य यही है। नामिप का यही महत्त्व है। िप सुि िैतन्य को िाग्रत करता है। हम चितना अचधक िप करते हैं, हमारी सुि िेतना उतना ही अचधक िागरूक बनती है। िप-साधना की यही मचहमा है।

लेचकन, िप करते समय हमें अपनी चिह्वा को पचवत्र रखना िाचहए। सत्य विन, मृदु विन तथा चहतकारी विन बोलने से चिह्वा पचवत्र बनती है। कठोर विन और व्यंग विन बोलने से चिह्वा अपचवत्र बनती है। पचवत्र चिह्वा ही नामिप करने की अचधकारी है। नामिप करते समय मन को भी पचवत्र रखना िाचहए। स्वाथिपूचति की कामना से रचहत और परोपकार के चविारों ंसे पररपूररत मन पचवत्र होता है।

इस प्रकार भगवन्नामिप या भगवन्नाम-साधना की अचमत शत्मक्त के प्रचत िागरूक रहते हुएचिह्वा और मन को पचवत्र रख कर अचधकाचधक नामिप करते रहना िाचहए।

# ४. िप-साधना

पि-साधना में प्रगचत करने के चलए िप में चनयचमतता होनी आवश्यक है। यचद चकसीचदन आपके पास कम समय हो अथवा आप व्यस्त हों, ं तब भी आपको िप करने के चलए बैठनाहै और कम-से-कम तीन माला िप करना है।

दूसरी बात यह है चक अपने इष्टदेव के प्रचत चनष्ठा-भाव के साथ िप करना िाचहए। प्रायः साधकों ंमें चवक्ेषेप और िंिलता रहती है। एक साधक का उदाहरण लें। वह कृष्ण-मन्त्र की दीक्षा लेता है। चफर वह महाचशवराचत्र के अवसर पर पशुपचतनाथ िाता है। वहााँ पर शंकर-भक्त उसे बतलाते हैं चक शंकर भगवान् बहुत िल्दी प्रसन्न हो िाते हैं। उनकी भत्मक्त बहुत सरल है। उसके चलए अचधक करना भी नहीं ंपडता। बस, थोडा पानी िालो, एक-दो चबल्व-पत्र और पुष्प िढ़ा दो। और क्या करना है! वह शंकर िी से प्रभाचवत हो िाता है। िन्माष्टमी के पवि पर वह वृन्दावन िाता है और वहााँ उसे कृष्ण-भत्मक्त अच्छी लगने लगती है। ऐसा नहीं ंहोना िाचहए। यचद िप-साधना में प्रगचत करनी है, तो अपने इष्टदेव और इष्टमन्त्र के प्रचत ही पूणि चनष्ठा का भाव होना िाचहए। भगवान् के अनेक स्वरूप हैं और सब अचे्छे हैं। अपने-अपने चलए अपना-अपना मन्त्र और इष्टदेव ही ठीक हैं; इसचलए त्मस्थर चनष्ठा तथा भत्मक्त के साथ मन्त्र का िप करना िाचहए।

मन्त्र-िप चकसी सांसाररक लक्ष्य की प्रात्मि के उदे्देश्य से नहीं ंकरना िाचहए। भगवान् की प्रात्मि के चलए आपने मन्त्र तो ले चलया। आपका मुकदमा हाईकोटि में है। उसकी तारीख निदीक आ गयी। मुकदमे में िीतने के चलए आप दश माला ज्यादा िपने लग गये। यह नहीं ंहोना िाचहए। अपना मूल लक्ष्य न भूलें। उसे प्राि करने के चलए चनष्काम भाव रखें। मुकदमा िीतने-िैसा सकाम भाव नहीं ंरखें। चनष्कामता आपके आध्यात्मत्मक िीवन की प्रगचत के चलए अनुकूल होगी। थोडी-सी भी सकामता आ िाने से आपकी साधना कलुचषत हो िाती है। इसचलए साधक की ओर से िीवन के अत्मन्तम समय तक पूणि चनष्काम भाव बनाये रखने की िेष्टा की िानी िाचहए।

वषि में दो-तीन बार पुरश्चरण या अनुष्ठान भी करना िाचहए। पुरश्चरण का अथि है चक आपके मन्त्र में चितने अक्षर हैं, उतने लाख बार िप करना। अनुष्ठान का अथि है चक आपको चनधाररत अवचध में प्रचतचदन चनचश्चत समय तक िप करना है। छोटे मन्त्र की अपेक्षा लमे्बे मन्त्र का पुरश्चरण करने में अचधक समय लगता है। उदाहरण के चलए यचद आपके मन्त्र में बारह अक्षर हैं, तो आपको बारह लाख बार िप करना होगा। यचद पुरश्चरण करने में कचठनाई हो, तो आप अनुष्ठान कर सकते हैं। अनुष्ठान की अवचध तीन चदन, सात चदन, ग्यारह चदन, एक पक्ष, इक्कीस चदन, एक माह, िालीस चदन आचद हो सकती है। इस अवचध में प्रचतचदन चनयचमत रूप से सुबह-शाम तीन-तीन या िार-िार घणे् का िप चकया िाना िाचहए।

िप करते समय एकाग्र-चित्त हो कर यह भावना करनी िाचहए चक हमारे इष्टदेव सूक्ष्म रूप से हमारे सामने उपत्मस्थत हैं। एक समय में चितना िप करने का संकल्प ले कर पद्मासन, चसद्धासन, स्वत्मस्तकासन अथवा सुखासन में बैठें, उतना िप पूरा करके ही उठें। इस मानचसक अनुशासन के साथ पुरश्चरण या अनुष्ठान करना उचित होता है।

िप-साधना के िारा भगवत्प्रात्मि अथवा भगवद्-अनुभूचत के चलए उपयुिक्त चवचधयााँ बहुत सहायक चसद्ध होंगी। इन चवचधयों ंके अनुसार िप-साधना करने से आप भगवत्कृपा प्राि करने की पात्रता अचिित करेंगे।

# ५. चनरचभमानता

हमें कभी भी यह नहीं ंसोचना ािचहए-हमने इतनी साधना कर ली, हमने इतने पुरश्चरण कर चलये, हमने इतनी बार रामायण-पाठ कर चलये। साधक के चलए यह हाचनकारक चिन्तन है। िहााँ यह बात मन में आयी, आप माया में फाँस गये। इसके बाद आपकी साधना की चदशा बदल ाियेगी। आप समझेंगे- मैं आगे िा रहा हाँ; लेचकन आप गलत चदशा में आगे िा रहे होंगें। आपको चसत्मद्ध चमल सकती है, िमत्कार करने की क्षमता आपके अन्दर उत्पन्न हो सकती है और आपको मान-सम्मान भी चमल सकता है; लेचकन चिस लक्ष्य को प्राि करने हेतु आपने साधना प्रारम्भ की थी, उससे आप वंचित रह िायेंगे।

गुरु महारािा कहते थे चक सांसाररक अचभमान से आध्यात्मत्मक अचभमान अत्यचधक भयावह है। कोई धनवान् अपने धन का अचभमान करता है। यह उतना खतरनाक नहीं ंहै चितना चक साधना का अचभमान। िब साधक सोचता है : मैं तपस्वी हाँ; मैंने इतने पुरश्चरण चकये है; मैंने इतनी बार भागवत का पाठ चकया है; मैं अमुक वसुतुओं ंका सेवन नहीं ंकरता; मैं प्रात: साढ़े तीन बिे उठ िाता हाँ, ठण्ढे पानी से स्नान करता हाँ; इतने प्राणायाम करता हाँ-तब समझना ाचिहए चक वह भगवान् के हाथ में नहीं,ं बत्मि माया के हाथ में है।

साधना-अचभमान के अनचगनत सूक्ष्म रूप हैं। यह अनेक प्रकार के वेश बदल कर आता है। कभी यह कहेगा-भगवान् की कृपा से, सन्तों ंके आशीविाद से मैं इस कचलयुग में आ कर के भी इसमें नहीं ंफाँसा हाँ। चकतना अनुग्रह है उनका ! इसीचलए मैं साधना कर रहा हाँ। यहााँ भगवान् के स्मरण के वेश में अचभमान बोल रहा है। यह बडी चवचित्र बात है! यह और कुछ नहीं,ं मन की िाल है। इससे दूर ही रहना ािचहए।

साधक को कहना ािचहए-हम अचंकनि हैं; कुछ भी नहीं ंहैं; हमारे अन्दर इतने अवगुण हैं, इतने दोष हैं, इतनी दुबिलताएाँ हैं चक हमें आश्चयि होता है चक भगवान् क्यों ंऔर कैसे हमें साधना-मागि में ले आये। इसके चलए मैं चबलकुल योग्य नहीं ंहाँ। ऐसा सोच-चविार कर हमें भाव-चवह्वल हो कर रोना ािचहए।

भगवान् के चनकट रहने वाले लोगों ं में भी यह अचभमान आ िाता है। िय-चविय के अन्दर यह अचभमानआया।अिुिनकेअन्दरभीयहअचभमानआया।गरुडकेअन्दरभीयहअचभमान आया। भीमसेनकेअन्दरभीयहअचभमानआया।भगवान्नेअनुग्रहकरकेउनकेगविकोभंग चकया-उनें् भंग करना पडा; क्योंचंक बाकी सब दोष दूर हो गये थे, एक यही दुगुिण रह गया था। इसचलए भगवान् को ऐसा करना पडा। भगवान् के चनकट रहने वाले व्यत्मक्त भी िब इस अचभमान िारा पराभूत हो िाते हैं, तो हमारा क्या वश है? अपनी दैचनक साधना में हमें रोि भगवान् से प्राथिना करनी िाचहए-हे प्रभु! मुझे चनरचभमान रखो। मेरे अन्दर आध्यात्मत्मक गवि तथा साधना का अहंकार न आने पाये। तुम्हीं ं ऐसा कर सकते हो।

तचमलनािु में एक बहुत बडे सन्त हुए हैं- रामचलंग स्वामी। वह िानते थे चक अहंकार बहुत बडा शत्रुरु है। अत: वह हमेशा अपने हाथ िोडे रहते थे—श्रद्धांिचल की मुद्रा में। यह मुद्रा नम्रता की प्रतीक है। इसका अथि है-दूसरों ंका आदेश मानने की तत्परता, चनरहंकाररता। इस मुद्रा में अंहकार नहीं ंआ सकता है। इससे नम्रता ही आ सकती है। नम्रता हमारा रक्षा-कवि है। साधना-मागि में बढ़ने के चलए यह हमारा बहुत बडा अवलम्ब है।

गुरु महाराि कहा करते थे चक मैं चसखाने वाला हूँ; मुझे औरों ं से ज्यादा मालूम है—यह चविार आपके अन्दर कदाचप नहीं ं आना िाचहए। हमेशा सोिना िाचहए-मैं सीखने वाला हूँ, चसखाने वाला नहीं।ं आप चकतनी ही आध्यात्मत्मक ऊँिाई पर हों,ं अपने को मात्र चवद्याथी और सीखने वाला ही समझें। हमेशा ऐसा सोिें चक हमने अभी-अभी साधना-मागि में प्रवेश चकया है। आप इन्फैंट क्लास (चशशु-कक्षा) में हैं-ऐसा मान करके रहने से ही आप एम. ए., पी-एि. िी. की चिगररयाँ पा सकते हैं। दूसरी ओर, आप इन्फैं ट क्लास में भी न हों ं तथा अपने को एम. ए., पी-एि. िी. मानते रहें, तो आप बुद्धू ही रह िायेंगे। इससे आगे की प्रगचत के चलए दरवािा बन्द हो िायेगा। िब हमारे अन्दर यह भाव आ िाता है चक मैं सब-कुछ िानता हूँ, तब ज्ञान का चवकास बन्द हो िाता है। मैं नहीं ं िानता हूँ; बहुत कम िानता हूँ तथा बहुत-कु छ िानने के चलए बाकी है-ऐसा भाव िो रखता है, उसके ज्ञान के चवकास के चलए कोई अवरोध नहीं ं है। उसका ज्ञान बढ़ता ही रहेगा। उसकी प्रगचत होती ही रहेगी। उसका चवकास होता ही रहेगा। अंग्रेिी भाषा के एक लेखक ने चलखा है चक इस संसार का प्रत्येक आदमी अज्ञानी है-एक व्यत्मक्त एक चवषय में तो दूसरा व्यत्मक्त दूसरे में। परन्तु अज्ञानी है हर कोई। इस तथ्य में चकतनी सत्यता है! इसचलए हमें सबसे सीखने के चलए तैयार रहना िाचहए-िेतन िगत् से भी। हम अचग्न को सुलगाते हैं। अचग्न सुलगते ही क्या करती है-भक-भक करके ऊपर उठने लगती है। अचग्न की लपट कभी भी नीिी नहीं ं िाती, उसका अधोगमन कभी भी नहीं ं होता। अचग्न से हमें यह सीखना िाचहए चक हमारे िीवन में िो-कु छ है-क्षमता, शत्मक्त आचद-सदैव उसका ऊर्ध्िगमन हो, अधोगमन कभी नहो।

अचभमान िीवन का अधोगमन है, चनरचभमानता िीवन की ऊर्ध्िगामी यात्रा का प्रारम्भ है।

# ६. गुरु-भत्मक्त

परात्पर, अगम, अगोिर, अचिन्त्य तत्त्व भगवत्-तत्त्व है। यह बुत्मद्ध की पहुाँि से परे है।
वह मन से भी परे है। दीघि ध्यान के िारा िब मन चबलकुल शान्त हो िाता है, तब ज्ञानि–िुषु खुलता है। इस िकुषु से ही भगवत्-तत्त्व का नूयूनाचधक साक्षात्कार चकया िा सकता है। शान्त मन की अवस्था में मन की सारी प्रचक्रयाएँ बन्द हो िाती हैं। इसे योगसूत्र में चित्तवृचत्त-चनरोध की अवस्था कहा गया है अथाित् इस अवस्था में चित्त या मन में चकसी प्रकार की वृचत्त या चविार नहीं ंहोता, मन में सोिने की कोई प्रचक्रया नहीं ंहोती तथा मन एक चविारहीन त्मस्थचत में होता है।
ज्ञानि–िुषु मन से परे एक ऐसी दृचष्ट होती है, चिसे चदव्य दृचष्ट कहते हैं। िब तक मन में वृचत्तयााँ होती हैं, तब तक ज्ञानि–िुषु चनत्मिय बना रहता है। िब मन वृचत्तयों ंसे शून्य हो िाता है, तब ज्ञानि–िुषु खुल िाता है। उसके िारा भगवत्-तत्त्व का थोडा-बहुत दशिन चकया िा सकता है। इसका दशिन करने से मायाि–चनत अज्ञान का अन्धकार चमट िाता है। प्रकाशमय चदव्य ज्ञान की ज्योचत हमारे अन्दर भर िाती है। इस तत्त्व के चवषय में हमें समझना है, इसका साक्षात्कार करना है। यही हमारा परम लक्ष्य है।

बि चकसी वसुतु से हमारा थोडा-बहुत पररिय हो िाता है, िब बुत्मद्ध से उसकी नूयूनाचधक िानकारी हो िाती है, उसके बाद ही उसके वास्तचवक स्वरूप को समझना सम्भव हो पाता है। बि भगवत्-तत्त्व के चवषय में हम कुछ िानते ही नहीं ंहैं, तब उसके चवषय में चिन्तन चकस प्रकार हो सकता है? पहले उसके चवषय में कुछ-न-कुछ पूवि-धारणा या अस्थायी चविार होना िाचहए। हो सकता है चक यह चविार अत्मन्तम चविार न हो, पूणि सत्य न हो; चफर भी यह भगवत्-तत्त्व के साक्षात्कार में सहायक तो है ही।

हमारे धमिग्रन् भगवत्-तत्त्व की पूवि-धारणा चनचमित करने में हमें सहायता प्रदान करते हैं। उनसे हमें िो भी प्राि होता है, वह भगवत्-तत्त्व नहीं ंहै; परनुतु उससे भगवत्-तत्त्व का साक्षात्कार करने में सहायता चमलती है। छत पर पहुाँिने के चलए सीढ़ी सहायक होती है; परनुतु सीढ़ी छत नहीं ंहै। सीढ़ी के अत्मन्तम िणेडे पर पहुाँिने पर भी वह छत नहीं ंहै। उसे छोड करके ही छत पर पहुाँिा िा सकता है। लेचकन वहााँ तक पहुाँिने के चलए सीढ़ी अचनवायि है। इसी प्रकार भगवान् और भगवत्-तत्त्व का ज्ञान प्रदान करना पुराण, सूमृचत, शुरुचत, उपचनषद्, वेदान्त-सूत्र, गीता आचद का मुख्य कायि है। इस ज्ञान के आधार पर हम उस तत्त्व का चिन्तन और चफर साक्षात्कार कर सकते हैं।

परनुतु धमिग्रन्ों ंमें भगवत्-तत्त्व का वणिन अत्यन्त सूक्ष्म रूप में प्रसुतुत चकया गया है। अवश्य ही पुराणों ंमें उसकी प्रसुतुचत अपेक्षाकृत सरल तथा बोधगम्य है और सामान्य िन के चलए वे वरदान-स्वरूप हैं। चफर भी, सामान्यतः धमिग्रन्ों ंमें भगवत्-तत्त्व के वणिन को स्वयं समझना अत्यन्त कचठन है। यद्यचप मुिण-प्रौद्योचगकी के कारण ये ग्रन् अब दुलिभ नहीं ंरहे, चफर भी इन्ें समझना कचठन है।

प्रािीन काल में यचद कोई चिज्ञासु धमिग्रन्ों ंको भली प्रकार समझना िाहता था, तो वह सदैव साधु-सन्तों ंया अपने गुरु की सहायता चलया करता था। वह उन्ें उनके पास बैठ कर पढ़ता था। वे उसके चनचहताथों को समझाते थे। साधु-सन्तों ंया गुरु की सहायता चलये चबना धमिग्रन्ों ंको समझने का प्रयास करने से उन्ें गलत ढंग से समझा िा सकता है और तब अथि का अनथि हो िाता है। यचद गुरु की कृपा हो, तब ऐसी भूल होने की आशंका नहीं ंहोती।

भगवत्-तत्त्व अत्यन्त सूक्ष्म है, उससे हमारा कोई पररिय नहीं ंहै। भगवान् को हमने देखा नहीं ंहै; चकन्तु हम िानना िाहते हैं चक भगवत्ता क्या होती है। हम कहते हैं-भगवान् की दया,
भगवान् का प्रेम । परन्तु इसका यथाथि अनुभव कैसे करें? यह गुरु के िारा ही सम्भव हो सकता है।

भगवान् को तो हमने देखा नहीं; ं चकन्तु अपने गुरु से हम पररचित होते हैं। गुरु के व्यत्मक्तत्व से चदव्यता और पचवत्रता की चकरणें फूटती हैं। उनके समक्ष मन की समस्त शंकाएँ समाि हो िाती हैं। उनके समीप िाते ही हमें शात्मन्त प्राि होती है। उनके पास बैठते ही हमें आनन्द प्राि होता है, मन प्रसन्न और शान्त हो िाता है। उनके साचन्नध्य में हम चिस प्रेम और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं, उससे हम अनुमान लगा सकते हैं चक भगवान् का स्वरूप क्या होगा। हम सोिने लगते हैं चक िब ऐसा असाधारण व्यत्मक्तत्व (गुरु का व्यत्मक्तत्व) संसार में हो सकता है, तब भगवान् भी अवश्य होगा। गुरु को देख कर हम भगवान् के चदव्य स्वभाव का थोडा-बहुत अनुमान लगा सकते हैं। सूमृचत, शुरुचत तथा पुराणों ंमें भगवान् के चिन गुणों ंका वणिन है, उन्हें िब हम गुरु में देखते हैं, तब इस प्रकार का अनुमान लगाना सहि और स्वाभाचवक हो िाता है।

धमिग्रन् कहते हैं चक भगवत्-तत्त्व की सूक्ष्मता को हृदयंगम करने के चलए गुरु-भत्मक्त एक सरल उपाय है। चिस प्रकार भगवान् में आपकी भत्मक्त है, उसी प्रकार गुरु में भी भत्मक्त होनी िाचहए। तब गुरु-कृपा से ही उस तत्त्व का रहस्य उद्घाचटत होगा। श्रवण, मनन, चनचदध्यासन आचद भी गुरु-भत्मक्त के चबना उस तत्त्व को समझने में सहायक नहीं ंहोते।

गुरु की सेवा-शुशूरूषा करना, गुरु की रुचि-अरुचि का ध्यान रखते हुए उनकी आज्ञा का पालन करना और गुरु िारा चदखाये गये साधना-मागि पर िलने का अनवरत प्रयास करते रहना ही गुरु-भत्मक्त है। इससे गुरु का अनुग्रह प्राि होता है।
गुरु-भत्मक्त को चवस्तार से समझने का प्रयास करें। गुरु-भत्मक्त का अथि है-गुरु-सेवा करने की तत्परता । गुरु-आज्ञा का पालन करना गुरु की सेवा है। गुरु की अवज्ञा करना गुरु का अपमान करना है। गुरु का एक-एक विन अनमोल होता है। उनके आदेशों ंका पालन न करने से पता िलता है चक चशष्य के हृदय में गुरु का कोई स्थान नहीं ंहै। गुरु के प्रचत हमारा क्या भाव है, उसे िानने के चलए हमें आत्म-परीक्षण करना िाचहए। यह आवश्यक है। यचद हम ऐसा नहीं ं करेंगे, तो हम स्वयं अपनी गुरु-भत्मक्त का मूल्यांकन नहीं ंकर सकेंगे। यह सम्भव है चक ऊपर-ऊपर से हम भावुकतावश गुरु को बहुत मान-सम्मान दें; परन्तु यह वास्तचवक गुरु-भत्मक्त नहीं ंहै। मान-सम्मान की ऊपरी भावना की िडें बहुत गहरी नहीं ंहोतीं। ं कौन िाने हमारे अन्दर गुरु के प्रचत चवरोध का भाव हो और ऊपर से हम उनका सम्मान करते हों। ं इसचलए आत्म-चनरीक्षण करना आवश्यक है। गुरु के आदेशों ंका पूणितः पालन करने से ही गुरु-भत्मक्त पूणि होती है। िब गुरु-भत्मक्त पूणि होती है, तब सूमृचत, शुरुचत आचद ग्रन्थों ंकी सूक्ष्म बातें स्पष्ट होने लगती हैं तथा ज्ञान का प्रकाश अपने-आप सहि रूप से प्रकट होने लगता है।

गुरु चशष्य से क्या अपेक्षा करते हैं? कुछ भी अपेक्षा नहीं ंकरते। गुरु यचद उससे अपेक्षा करें, तो वह गुरु नहीं ंहैं। वह संन्यासी हो सकते हैं, योगी हो सकते हैं, सन्त हो सकते हैं; लेचकन वह गुरु नहीं ंहो सकते। गुरु तो शत-प्रचत-शत केवल देना ही िानते हैं। वह देना ही िाहते हैं, लेना नहीं ंिाहते; क्योंचक उन्हें लेने की कोई आवश्यकता ही नहीं ंहै। भगवान् उनके

सविस्व हैं। िब उन्होंनें पररपूणि भगवान् को अपने चदल में बसा चलया है, तब इस अपूणि िगत् से वह कुछ लेना ही क्यों ाहिेंगे? लेचकन चशष्य से गुरु यह अपेक्षा अवश्य रखते हैं चक चशष्य उनसे
भी अचधक महान् बने, अचधक पचवत्र बने, अचधक चदव्य बने । सारा संसार उससे प्रेरणा प्रिा करे। गुरु िाहते हैं चक उन्हें अपने गुरु से िो-िो चमला है, वह-वह चिगुचणत हो कर उनके चशष्य को प्रिा हो, ताचक सारा िगत् उससे लाभाचन्वत हो सके।

यह बात चशष्य को भली-भाँचत समझ लेनी िाचहए। प्राणों ंकी बािी लगा कर भी उसे गुरु के आदेशों ंके अनुसार आध्यात्मत्मक उन्नचत करने का प्रयास करते रहना िाचहए। प्रयास में सफलता न चमले, तो भी चनराश नहीं ंहोना िाचहए। प्रयास करते ही रहना है-यह चनश्चयात्मक भाव चशष्य में होना िाचहए।

चनश्चयात्मक भाव कैसा होना िाचहए, इसका संकेत हमें एक औपचनषचदक दृष्टान्त से चमलता है। समुि के चकनारे पक्षी का एक घोंसला था। उस घोंसले में कुछ अण्डे भी थे। एक चदन नर-मादा दोनों ंही पक्षी घोंसले में नहीं ंथे। तभी समुि में ज्वार आया और घोंसले को बहा कर ले गया। िब वे पक्षी आये, तो देखा चक घोंसले का नाम-चनशान भी नहीं ंथा। बस, पानी-ही-पानी है। उन पचक्षयों ंने सोिा- 'इस समुि ने तो हमारा सब-कुछ नष्ट कर चदया। कुछ भी हो, हम उस घोंसले को वापस लायेंगे। लेचकन यह कैसे होगा? हम समुि के िल को इस स्थान से हटा देंगे। तब इस खाली स्थान में हमारा घोंसला दीख िायेगा।' अब वे समुि के िल को हटाने में लग गये। कहाँ अगाध समुि, और कहाँ वे दो छोटे िीव! लेचकन उनका चनश्चय अटल था। उन दोनों ंने घास के एक-एक चतनके अपनी िोंिों में दबाये। चतनकों ंको पानी में िुबाया। चतनकों ंमें एक-दो बूंद पानी लग गया होगा। चफर चतनकों ंको रेत में ले िा कर उनका पानी रेत में चछडक चदया। यह थी उनकी चवचध। इस चवचध से समुि का िल हटाने में वे लग गये। सोचिए िरा, चकतना बडा काम था यह! इस काम को पूरा करने में उन्हें चकतने िन्म लेने पडते ! और कई न्मि लेने के बाद भी यह काम पूरा होने की आशा नहीं ंथी। लेचकन वे दोनों ंअपने काम में लगे रहे। वे चतनके को िुबाते और उसमें लगा हुआ पानी रेत में चछडक देते। दृढ़ चनश्चय था उनका - तभी तो उन्होंनें चहम्मत नहीं ंहारी। वे ऐसा करते रहे। न िाने कब तक करते रहे। तभी एक साधु उधर से चनकले। उन्होंनें पचक्षयों ंसे सारी बात पूछी। पचक्षयों ंके ऐसे दृढ़ और चवलक्षण चनश्चय की बात सुन कर वह आश्चयिचकत रह गये। पचक्षयों ंको साधु की प्रचतचक्रया िानने का समय नहीं ंथा। साधु को अपनी बात बता कर वे चफर अपने काम में लग गये।

साधु सोिने लगे-'इन पचक्षयों ंमें चितना चनश्चयात्मक भाव है, उतना भाव चकसी साधक में हो, तो भगवान् भी चमल िायें। क्या इन पचक्षयों ंको अपना घोंसला नहीं ंचमल पायेगा ? िहाँ इतनी दृढ़ता हो, इतना पुरुषाथि हो, वहाँ कायि को सफल होना ही िाचहए। भगवान् की सृचष्ट में ऐसा पुरुषाथि असफल कैसे हो सकता है? साधु ने समुि का ध्यान चकया और आदेश चदया चक वह पचक्षयों ंको उनका घोंसला लौटा दे। तभी एक लहर आयी और घोंसले को तट पर छोड गयी।

चशष्य में इसी प्रकार का चनश्चयात्मक भाव होना िाचहए। इसी भाव से गुरु के आदेशों ंका पालन करना है। यही गुरु-सेवा है। गुरु-सेवा करने से गुरु-कृपा प्रिा करने में कोई 2/(4 * 45) नहीं ंरह िायेगा। गुरु-कृपा प्रिा करना चशष्य के गुरु-भक्त होने का प्रमाण है। गुरु-कृपा प्रिा करने के पश्चात् भगवत्-तत्त्व का साक्षात्कार करने का मागि प्रशस्त हो िाता है।

# ७. ब्रह्मियि

सत्य-सनातन वैचदक धमि में िार आश्रम हैं। प्रथम आश्रम ब्रह्मियि-आश्रम है। इस आश्रम में चवद्याथी–ीवन व्यतीत चकया िाता है। चितीय आश्रम में व्यत्मक्त दाम्पत्य–ीवन चबताते हुए पररवार का उत्तरदाचयत्व वहन करता है। यह चितीय आश्रम गृहस्थ-आश्रम है और गृहस्थाश्रम का कतिव्य-कमि सुिारु रूप से पूरा करने के बाद उनसे मुक्त हो कर व्यत्मक्त तृतीय आश्रम में प्रवेश करता है। यह तृतीय आश्रम वानप्रस्थ-आश्रम है, चिसमें समाि का शुभ-चिन्तक बने रहते हुए व्यत्मक्त सपत्नीक अपना अचधकांश समय सत्संग, स्वाध्याय, पुरश्चरण, अनुष्ठान, तीथािटन आचद में व्यतीत करता है।

तुिथािश्रम अथाित् संन्यासाश्रम में केवल भगवद्-चिन्तन करना होता है। चबस्तरा बाँध चलया है। चटकट खरीद चलया है। प्लेटफामि पर बैठे हुए हैं। गाडी आने का इन्तिार है। इस अवस्था में सांसाररक प्रपंिको पकड कर बैठना मूखिता है। इस समय प्रपंिको छोड कर संसार से प्रस्थान करने की तैयारी करनी िाचहए। अब परमाथि का चिन्तन करना िाचहए। मन को उसी में लगा देना िाचहए। चिसके अन्दर चववेक है और िो चविारशील है, उसके चलए ऐसा करना सहि होगा। अन्यथा, चिसके पास ममता और आसत्मक्त है, वह प्रपंि छोड कर िाने का समय आने पर दु:खी होगा और दूसरों ंको भी दु:खी करेगा।

ये िार आश्रम हैं। अब हम ब्रह्मियािश्रम पर चविार करेंगे। ब्रह्मियि का क्या अथि होता है? अचववाचहत अवस्था। ब्रह्मिारी का अथि होता है अचववाचहत व्यत्मक्त और िब वह चववाह करके गृहस्थ बन िाता है, तब वह ब्रह्मिारी नहीं ंरहता। और िो गृहस्थ में प्रवेश करना ही नहीं ंिाहता तथा िीवन-पयिन्त ब्रह्मिारी रहना िाहता है, उसे कहते हैं नैचष्ठक ब्रह्मिारी।

लेचकन ब्रह्मियि शब्द का एक और भी अथि है। चिस प्रकार का व्यवहार, चिस प्रकार का आिरण व्यत्मक्त को ब्रह्मज्ञान प्राि करने में सहयोग देता है, वह है ब्रह्मियि। चिस चविार, चिस वाणी, चिस िररत्र और चिस व्यवहार से हमें ब्रह्मज्ञान प्राि होता है और ब्रह्म-साक्षात्कार प्राि करने में सहायता चमलती है, उसे कहते हैं ब्रह्मियि। कौन-सा ऐसा व्यवहार है, कौन-सा ऐसा आिरण है, कौन-सा ऐसा िररत्र है िो हमारे चलए ब्रह्मज्ञान प्राि करने में, ब्रह्म-साक्षात्कार करने में सहायक है? हमारे समस्त धमिग्रन्थों ंने इस प्रश्न का उत्तर अनेकानेक प्रकार से प्रस्तुत चकया है।

िो व्यत्मक्त आशा-तृष्णा का दास है, वह ब्रह्मज्ञान को प्राि नहीं ंकर सकता। ब्रह्मियि का अथि है-आशा-तृष्णा को अपने वश में रखना, आशा-तृष्णा का स्वयं माचलक बन िाना। िो अपने िीवन में असंयम रखता है, चिसकी इत्मियाँ उसके वश में नहीं ंहैं, काम-क्रोध, लोभ-मोह, मद-मात्सयि इत्याचद चिसके वश में नहीं ंहैं, वह ब्रह्मज्ञान को प्राि नहीं ंकर सकता है। वह साधना नहीं ंकर सकता है। उसका चित्त भगवान् की ओर नहीं ंिा सकता है। वह चवचक्षि हो िायेगा। वह इधर-उधर प्राचणयों ंऔर पदाथों के पीछे भागता रहेगा। ऐसी अवस्था ब्रह्मज्ञान और ब्रह्म-

साक्षात्कार के चलए सविथा प्रचतकूल है। इसचलए ब्रह्मियि का अथि संयम और इत्मिय-चनग्रह है। काम-वासना, क्रोध, लोभ, मोह और ममता के दमन को ब्रह्मियि करते हैं। शम और दम-ये
दोनों ंही ब्रह्मियि के अन्तगित हैं।

ऋचष-मुचनयों ंने, चसद्ध-महापुरुषों ंने, योगी िनों ंने इस बात का अनुभव कर चलया था चक रसनेत्मिय का संयम अन्य सब इत्मियों ंके संयम से बढ़ कर है। चिसने रसनेत्मिय को अपने वश में कर रखा है, उसने काम और क्रोध को भी अपने वश में कर चलया है। तब उन्ोंने कहा चक चिसे संयमी बनना है, उसको अपनी रसनेत्मिय पर चनयन्त्रण रखना िाचहए। इस प्रकार के चनयन्त्रण से आहार पर भी चनयन्त्रण हो िायेगा।

प्रत्येक इत्मिय पंितत्त्वों ंमें से चकसी-न-चकसी तत्त्व से सम्बद्ध है। रसनेत्मिय िल-तत्त्व से सम्बद्ध है। यह रसना एक चवचित्र इत्मिय है। यह कमेत्मिय भी है और ज्ञानेत्मिय भी है। वाणी कमेत्मिय है िो अचग्न-तत्त्व से सम्बद्ध है। रसनेत्मिय के समान िननेत्मिय भी िल-तत्त्व से सम्बद्ध है। इसचलए इन दोनों ंमें परस्पर सम्बन्ध है। इसचलए िो इत्मिय-चनग्रह करके, काम-वासना को अपने वश में करके एक सनुतुचलत िीवन चबताने का प्रयास करता है, उसे रसनेत्मिय पर चनयन्त्रण रखना िाचहए। इसके बाद ही योग के मागि में आगे बढ़ा िा सकता है।

महात्मा गान्धी ने ब्रह्मियि के ऊपर चवशेष प्रकाश िाला है। ब्रह्मियि-चवषयक उनके चविारों ं का संकलन प्रकाचशत हुआ है- 'संयम और भोग' । स्वामी चशवानन्द िी ने भी इस चवषय पर एक पुस्तक चलखी है। चितने भी सन्त-महापुरुष हुए हैं, उन्ोंने इस चवषय पर अपने-अपने मत व्यक्त चकये हैं, िैसे श्री रामकृष्ण परमहंस, श्री अरचवन्द, रामदास स्वामी। ब्रह्मियि का वास्तचवक अथि मात्र काम-वासना का ही संयम नहीं ंहै। ब्रह्मियि का अथि है समस्त इत्मियों ंका संयम। उदाहरण के चलए कान की बात लें। कान से कोई अश्लील वातिा नहीं ंसुननी िाचहए। िो बात हमारे मन के अन्दर गलत और अशुभ वृचत्तयों ंको िाग्रत करती है, उसे सुनना ही नहीं ंिाचहए। सुनने से मन में कई प्रकार की रािगुणात्मक, तमोगुणात्मक वृचत्तयाँ आ िाती हैं। तब चफर मन हमें गलत कायि करने की तरफ बढ़ने के चलए प्ेररत कर सकता है। इसचलए कान की इत्मिय को चनयन्त्रण में रखना िाचहए। इसी प्रकार, आँख की इत्मिय से केवल ऐसे दृश्यों ंको देखना िाचहए िो हमारे मन में पचवत्र वासनाओं ंको िाग्रत करें। िो दृश्य मचलन वासनाओं, ं मचलन संस्कारों ंऔर मचलन वृचत्तयों ंको िाग्रत करे, ऐसे दृश्य को हमें नहीं ंदेखना िाचहए। इसके अचतररक्त हमें ऐसी संगचत में और ऐसे वातावरण में रहना िाचहए, चिससे मन में अच्छे और पचवत्र चविार उत्पन्न हों।ं यह भी ब्रह्मियि का एक अंग है। यह सब करने से आप पूणि ब्रह्मिारी बन सकते हैं। ब्रह्मियि में प्रचतचष्ठत होने के चलए गान्धी िी ने पिास वषों तक प्रयास चकया और इसमें उन्ें पूणि सफलता चमली। इसी प्रकार स्वामी चशवानन्द िी ने भी इस चदशा में पूणि सफलता प्राप्त की।

ब्रह्मियि में प्रचतचष्ठत व्यत्मक्त का मन इतना पचवत्र बन िाता है चक उसमें चकसी प्रकार की नकारात्मक वृचत्त प्रवेश ही नहीं ंकर सकती है। इस प्रकार की अवस्था को प्राप्त करना है, तो समस्त इत्मियों ंका संयम करना होगा, ताचक मन पचवत्र रह सके। चिस क्षेत्र में चकसी इत्मिय के अचनयत्मन्त्रत होने के कारण मन में चवक्षेप उत्पन्न हो िाता हो, उस क्षेत्र से अपने को अलग रखना िाचहए।

हम ािनते हैं चक अपनी-अपनी इत्मियों ंपर कठोर संयम करने वाले चवश्वाचमत्रि–से ऋचष-मुचनयों ंका भी पतन हुआ। चफर, आपकी क्या दशा होगी? असंयचमत ािवन व्यतीत करते हुए हम यह सिों चक हम ब्रह्मज्ञान को प्रा कर लेंगे या हम चसद्ध बन ाियेंगे। यह चकस प्रकार सम्भव है। संयम के चबना हम ब्रह्मियि में प्रचतचष्ठत हो कर भगवान् को प्रा कर लेंगे, ऐसा सिोना हास्यास्पद है; ऐसा होना असम्भव है। भले ही पानी को मथने से घी चनकल आये और बालू से तेल चनकल आये; लेचकन समूपूणि इत्मियों ंका संयम चकये चबना ब्रह्मियि को उपलब्ध करना असम्भव है।

साधनि–तुष्टय (चववेक, वैराग्य, षट्-सम्पत् तथा मुमुकुषुत्व) में षट्-सम्पत् (शम, दम, उपरचत, चतचतक्षा, श्रद्धा तथा समाधान) अििित करना तीसरा साधन है। प्रथम दो सम्पचत्त हैं-शम और दम । शम का अथि है-आशा-तृष्णा का दमन करके मन को शान्त करना। िब तक आशा-तृष्णा है, तब तक मन में उथल-पुथल रहेगी और मन चवचक्षि रहेगा। दम का अथि है-इत्मियों ंको अपने वश में रखना। आशा-तृष्णा का त्याग करना और इत्मिय-संयम करना-यह समस्त प्रकार की साधनाओं ंकी आधारचशला है। इसी के ऊपर हम साधना के भवन का चनमिाण कर सकते हैं। अतः ब्रह्मियि को एक अत्यन्त अमूल्य तथा आवश्यक साधना समझ कर उसमें संत्मस्थत होने का प्रयास करना ािचहए। इस प्रयास में सफल होने पर चन:सने्देह आप अपना आध्यात्मत्मक लक्ष्य प्रा कर सकेंगे।

मैंने प्रारम्भ में िार आश्रमों ंकी ििाि की थी। पूणि इत्मिय-चनग्रह और संयम प्रथम, तृतीय और िितुथि आश्रमों ंके चलए अचनवायि हैं। चितीय आश्रम अथाित् गृहस्थाश्रम में कुल-परम्परा को लिाते रहने हेतु मयािदा और सीमा के अन्दर रहते हुए सन्तानोत्पचत्त की िाती है। मयािदा और सीमा का चनणिय अपने चववेक से करना ािचहए-इस चवषय में चनयम चनधािररत नहीं ंचकये िा सकते। परनुतु इतना अवश्य कहा िा सकता है और महात्मा गान्धी भी यही कहते थे चक इस मयािदा-सीमा का सम्बन्ध कृचत्रम उपायों ंसे नहीं ंहै। आत्म-संयम कृचत्रम उपायों ंसे बढ़ कर है।

# ८. मन्त्र-दीक्षा

िब गुरु मन्त्र-दीक्षा देते हैं, तब उनका उदे्देश्य यह होता है चक चशष्य आदशि मानव बने। वह दुगुिणों ंसे मुक्त हो कर सदािारी बने, परोपकारी बने, िररत्रवान् बने, आध्यात्मत्मक रूप से िागरूक बने, भक्त बने। उसके िीवन की चदव्यता व्यक्त हो कर उसका और समाि का सुधार करे और वह ईश्वर-प्रात्मि के मागि पर बढ़ िले।

इसके अचतररक्त गुरु का कोई और उदे्देश्य नहीं ंहोता। ईश्वर से असम्बद्ध सांसाररक िीवन की समृत्मद्ध की ऊँािइयों ंपर चशष्य को पहुँाा देने का उदे्देश्य तो कभी भी नहीं ंहोता।

चशष्यों ंको अपनी आध्यात्मत्मक प्रगचत, मुत्मक्त और भगवत्प्रात्मि के उदे्देश्यों ंको पूरा करने के चलए ही मन्त्र-दीक्षा लेनी ािचहए। दूसरे शब्दों ंमें अचवद्या, अज्ञान और माया के अन्धकार से चनकल कर प्रबोधन के प्रकाश-क्ेषेत्र में पहुँा कर उन भगवान् को प्रा कर लेना ही उनका उदे्देश्य होना ािहिए, चिन्हें प्रा करके और कुछ प्रा करने को शेष नहीं ंरह िाता। िीवन की सफलता

मन्त्र-दीक्षा ले कर मन्त्रि-प की साधना िारा भगवान् को ही प्रिा कर लेने में है-मन्त्रि-प िारा चकसी भौचतक लक्ष्य को प्रिा करने में नहीं ंहै।

गुरु कभी भी चशष्य की सांसाररक कामनाओं ंकी पूचति के चलए मन्त्र-दीक्षा नहीं ंचदया करते। कभी-कभी गुरु इन कामनाओं ंकी पूचति के चलए कामना के पूरी होने तक कुछ चवचशष्ट मन्त्रों ंको पिने का परामशि देते हैं, परन्तु यह मन्त्र -दीक्षा देना नहीं ंहै। ये दो अलग-अलग बातें हैं।

लडकी १८ साल की हो गयी है। उसने बी. ए. पास कर चलया है। शादी नहीं ंहो रही है। माता-चपता गुरु के पास िाते हैं और अपनी समस्या व्यक्त करते हैं। तब गुरु उनको चववाह का मन्त्र दे सकते हैं-लेचकन साधना के चलए नहीं, ं मात्र पुत्री के चलए वर प्रिा करने हेतु । इसी प्रकार चिन दम्पचतयों ंके सन्तान नहीं ंहोती है, उन्हें उनके गुरु बहुधा सन्तानगोपाल-मन्त्र का िप करने को कहते हैं; परन्तु सन्तान होने के बाद इस मन्त्र का िप करने की आवश्यकता नहीं ंहै। इन मन्त्रों ंका चशष्य के आध्यात्मत्मक चवकास से कोई सरोकार नहीं ंहै। इन मन्त्रों ंका दीक्षा के मन्त्रि-ो इष्टदेव का मन्त्र है-से भी कोई सम्बन्ध नहीं ंहै।

इष्टदेव के मन्त्र की दीक्षा मात्र भगवत्प्रात्मि के चलए, आत्मज्ञान प्रिा करने के चलए दी िाती है। इसे अच्छी तरह से समझें। इसचलए िो इष्टदेव का मन्त्र है, उसे और चकसी सांसाररक कामना की पूचति के चलए नहीं ंिपना िाचहए।

हााँ, यचद साधक चकसी संकट में पड िाये और वह भगवान् को पुकारे, तो यह स्वाभाचवक है। यह त्रुचटपूणि नहीं ंहै। गिेंि ने पुकारा, िौपदी ने पुकारा, सब भक्तों ंने पुकारा है। चवपचत्त में भगवान् को पुकारना गलत नहीं ंहै। इससे भत्मक्त में कोई बाधा नहीं ंपडती, भत्मक्त में कोई कमी नहीं ंआती। भगवान् में हमारी श्रद्धा है। 'वह' हमारे अपने हैं, उनके ऊपर हमारा हक है। इसचलए हम 'उन्हें' पुकारते हैं, बुलाते हैं।

मन्त्र साक्षात् भगवान् है। भगवान् ही मन्त्र का स्वरूप ले कर हमें प्रिा होते हैं, हमारी िीवात्मा के अन्दर प्रवेश करते हैं और प्रवेश करके िीवात्मा को अपनी तरफ आकचषित करते हैं। वह चकतनी िल्दी या चकतनी देर में आकचषित करेंगे, यह िीवात्मा के ऊपर चनभिर रहता है। िब चशष्य अचधक श्रद्धा के साथ, अचधक प्रेम के साथ अचधक िप करता है, तब 'वह' िल्दी आकचषित करेंगे। मन्त्र-दीक्षा ले कर भी चशष्य आलसी हो गया और उसने मन्त्रि-प नहीं ंचकया, तब भगवान् के आकषिण का प्रभाव देर में पडेगा; परन्तु आकषिण-शत्मक्त तो मन्त्र में अवश्य ही है, क्योंचक मन्त्र स्वयं भगवान् ही हैं। 'वह' स्वरूप धारण करके िीवात्मा के अज्ञान को, बन्धन को काटने के चलए िीवात्मा के अन्दर प्रवेश करते हैं। िब चशष्य दीक्षा के माध्यम से मन्त्र को प्रिा करता है, तब वह भगवान् को ही स्वीकृचत दे कर अपने अन्दर बसा लेता है। िब तक मन्त्र उसके पास रहता है, तब तक भगवान् उसके पास रहते हैं।

मन्त्र-दीक्षा लेने के बाद यह समझना िाचहए चक हम बहुत सौभाग्यशाली हुए; परन्तु साथ ही हमारे ऊपर एक उत्तरदाचयत्व भी आ गया। दीक्षा लेने के पूवि तक चशष्य एक सामान्य व्यत्मक्त की तरह था। यचद वह कोई गलत कमि करता था, तब वह मात्र गलत कमि का ही अपराधी होता था। दीक्षा प्रिा करने के बाद गलत कमि करने से दो अपराध होते हैं-गलत कमि करने का अपराध और भगवान् के प्रचत चकया गया अपराध । भगवान् के प्रचत अपराध कैसे? िब मन्त्र के रूप में भगवान् चशष्य के अन्दर प्रवेश कर गये, तब उसके शरीर और मन-दोनों ंही भगवान् के

पचवत्र मत्मन्दर बन गये। गलत कमि करके या करवा कर चशष्य अपने शरीर और मन (ि◌ो अब भगवान् के ही हैं) को अपचवत्र करता है। भगवान् की वसुतुओं ◌ंको अपचवत्र करना भगवान् के प्रचत अपराध है। दीक्षा लेने के बाद चशष्य को अत्यन्त ि◌ागरूक रह कर ि◌ीवन व्यतीत करना ि◌ाचहए। भगवान् के मत्मन्दर को शुद्ध बनाये रखने के चलए उसे चवशेष सावधानी बरतनी ि◌ाचहए। अशुत्मद्ध के प्रवेश से भगवान् का मत्मन्दर अशुद्ध हो ि◌ाता है। अशुत्मद्ध क्या है? असत्य सबसे बडी अशुत्मद्ध है। भगवान् सत्यस्वरूप हैं। वह सत्यनारायण हैं। इसचलए चशष्य को असत्य का त्याग करना पडेगा।
दूसरी अशुत्मद्ध है क्रोध। क्रोध आसुरी सम्पदा है। मन्त्र–ि◌प और क्रोध-दोनों ◌ंमें कोई सामंस्यि नहीं ◌ंहै। मत्मन्दर में ि◌ो चसंहासन भगवान् के चलए है, वहााँ पर आसुरी सम्पदा को बैठाना ठीक नहीं ◌ंहै।
अचधकतर क्रोध व्यक्त होता है

चिह्वा ि◌ारा। हम कठोर शब्द बोल कर क्रोध व्यक्त करते हैं। चिस चिह्वा से चशष्य पचवत्र भगवन्नाम का उच्चारण करता है, उस चिह्वा से क्रोध व्यक्त करना, अनपेचक्षत बातें (चनन्दा, ि◌ुगली, ि◌ेष आचद से सम्बत्मन्धत बातें) करना या कटु विन बोलना उचित नहीं ◌ंहै। यचद चशष्य यह तु्रुचट करता है, तो उसकी चिह्वा चदव्य नाम का उच्चारण करने के योग्य नहीं ◌ंरह ि◌ाती। इसचलए यचद चशष्य को नाम का उच्चारण करना है, उसके चलए पात्रता अििचत करनी है, तो उसे अपनी चिह्वा को पचवत्र रखना ि◌ाचहए। साधक-चशष्य को यह प्रण ले लेना ि◌ाचहए चक चिस चिह्वा से वह मन्त्र या भगवन्नाम का उच्चारण करता है, उस चिह्वा से केवल परचहतकारी विन ही बोलेगा। इसके चलए उसे सदैव ि◌ागरूक रहना ि◌ाचहए, अन्यथा पुराने स्वभाववश वह अपनी चिह्वा का प्रयोग पुनः कटु विन आचद बोलने में करने लगेगा। इसचलए चशष्य को वाणी के ऊपर संयम रखने के चलए सदैव प्रयत्नशील रहना ि◌ाचहए। अब मन्त्र–ि◌प से सम्बत्मन्धत कुछ अन्य बातों ◌ंकी िििि◌ा करेंगे।

चकसी अन्य व्यत्मक्त की उपत्मस्थचत में दीक्षा-मन्त्र (इष्टदेव के मन्त्र) का सस्वर उच्चारण नहीं ◌ं करना ि◌ाचहए-मानचसक उच्चारण ही करना ि◌ाचहए। अकेले रहते समय सस्वर उच्चारण चकया ि◌ा सकता है। मन्त्र का कीतिन भी चकया ि◌ा सकता है। मान लीचिए, सत्संग में 'ॐ नमः चशवाय' का संकीतिन हो रहा है और हमारा मन्त्र है-'ॐ नमः चशवाय' । तब सबके साथ हम भी इस मन्त्र का कीतिन कर सकते हैं। परन्तु चकसी को मालूम नहीं ◌ंहोना ि◌ाचहए चक आप अपने मन्त्र का उच्चारण कर रहे हैं। अपना इष्टमन्त्र चकसी को बतलाना भी नहीं ◌ंि◌ाचहए। ि◌ब आप चलत्मखत ि◌प करते हैं, तब चलत्मखत ि◌प की चकताब को सबकी पहुाँि से दूर पूिा के कमरे में रखना ि◌ाचहए। इसे सब लोगों ◌ंको नहीं ◌ंचदखाना ि◌ाचहए। ि◌ब आप इष्टमन्त्र का चलत्मखत ि◌प करते हैं, तब वह चक्रया आपके और आपके इष्टदेव के बीि की अन्योन्य चक्रया बन ि◌ाती है-इसका तीसरे से कोई सम्बन्ध नहीं ◌ंहै।

रोि प्रातःकाल उठ कर शौि-स्नान आचद करने के पश्चात् आपको कम-से-कम ग्यारह माला ि◌प करना ि◌ाचहए। इसका अथि यह नहीं ◌ंहै चक ग्यारह माला ही ि◌प करना है, इससे अचधक नहीं ◌ंकरना है। चितना अचधक ि◌प हो सके, करना ि◌ाचहए; परन्तु ग्यारह माला से कम पि नहीं ◌ंकरना ि◌ाचहए। चकसी आवश्यक कायिवश चकसी चदन ि◌प न हो सके, तब दूसरे चदन ही पहले की कमी पूरी कर लेनी ि◌ाचहए और प्रायचश्चत्त में तीन माला ि◌प अचतररक्त करना ि◌ाचहए। चिस चदन मन्त्र-दीक्षा ली हो, प्रत्येक सिाह उस चदन तीन माला अचतररक्त ि◌प करना ि◌ाचहए। प्रत्येक वषि आपको कम-से-कम एक बार अक्षर-लक्ष ि◌प करना ि◌ाचहए। इसका अथि यह हुआ चक दीक्षा-मन्त्र में चितने अक्षर हैं, उतने लाख ि◌प करना ि◌ाचहए। उदाहरण के चलए 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' मन्त्र में १२ अक्षर हैं। इस मन्त्र का १२ लाख बार ि◌प चकया ि◌ायेगा। इसके चलए

आपको चहसाब रखना पडेगा चक आप प्रते्येक चदन में चकतना िप कर रहे हैं। प्रचतचदन चकये िाने वाले िप की संख्या सामान्यतः एक ही होनी िाचहए।
अब दीक्षा प्रिा करने वालों ंके चलए कुछ अन्य आवश्यक बातें। उन्ें िो कुछ भोिन करना है, उसे पहले अपने इष्टदेव को मानचसक रूप से समचपित करना िाचहए, तब उसे ग्रहण करना िाचहए। साकार रूप में इष्टदेव का ध्यान करते समय अथवा उनकी मूचति के सामने बैठ कर उनका ध्यान करते समय यह नहीं ंसमझना िाचहए-हमारे इष्टदेव उस साकार रूप या मूचति में ही सीचमत हैं। उनका परा-स्वरूप भी है। परा-स्वरूप में न उनकी कोई आकृचत है, न उनकी कोई मूचति है, न उनका रूप है, न नाम है। वह सविव्यापी हैं। वह सत्मच्चदानन्द-स्वरूप हैं। वह अन्तयिामी हैं। वह समस्त िीवों ंमें रहते हैं। वह सविव्यापी हैं, इस कारण समस्त चवश्व उन्ीं ंसे पररपूररत है। सब िगह वही हैं। चकसी भी स्थान में उनका अभाव नहीं ंहै। सब स्थान उनके स्थान हैं। समस्त स्थानों ंमें उनकी उपत्मस्थचत है। इसका तात्पयि यह है चक आप िो भी व्यवहार कर रहे हैं, िो भी बातें कर रहे हैं, िो भी सोि रहे हैं, िो भी कायि कर रहे हैं, वह सब उनके सामने हो रहा है।

दूसरी महत्त्वपूणि बात यह है :

**"सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरर जुग पानी।"**

अथाित् मेरे इष्टदेव प्रते्येक स्थान पर हैं, कण-कण में हैं। साधकों ंको अपने-अपने इष्टदेव के चवषय में इसी प्रकार सोिना िाचहए।

कृष्ण भगवान् कहते हैं चक 'मेरा सच्ा भक्त मुझे सबमें देखता है और सबको मेरे ही अन्दर देखता है; मुझको सविव्यापी समझता है।' आपको भी इसी प्रकार सोिना िाचहए। यह भाव रखना िाचहए चक िहााँ मैं हाँ, वह पचवत्र स्थान है। मेरे चलए अपचवत्र कुछ भी नहीं ंहै। आप दफ्तर में भगवान् के सामने हैं। दुकान में भगवान् के सामने हैं। खेतों ंमें भगवान् के सामने हैं। कायिशाला में, क्लीचनक में, कक्षा में - प्रते्येक स्थान पर अहचनिश, सदा-सविदा आप भगवान् से अन्दर-बाहर से, िारों ंओर से चघरे हुए हैं। उन्ीं ंके साथ और उन्ीं ंके साचन्नध्य में ही आपका िीवन व्यतीत हो रहा है। ऐसा समझते हुए तथा प्रते्येक स्थान की पचवत्रता को अनुभव करते हुए आपको सदैव अपना आिरण पचवत्र रखना िाचहए। आपको यह समझना होगा चक दीक्षा ले कर आपको अब अपेक्षाकृत अचधक िागरूक रहना है। आपको सोिना होगा-अब मेरा िीवन कैसा होना िाचहए। आप िैसे पहले रहते थे, उसी प्रकार रहते रहें—यह ठीक नहीं ंहै। दीक्षा प्रिा करना एक नया िन्म है। आपको चबलकुल बदल िाना पडेगा। एक दूसरा ही आदमी बन िाना पडेगा। यही दीक्षा का अथि है। तभी दीक्षा लेना सफल होगा।

यचद आप सोिें-मैंने पाप चकये हैं, बडा अपचवत्र िीवन चबताया है और दीक्षा-मन्त्र से मैं पचवत्र हो िाऊाँगा, पाप से मुक्त हो िाऊाँगा। यह सोिना ठीक नहीं ंहै। सब पापों ंको भस्म करके आपको नवीन िीवन प्रदान करने की शत्मक्त मन्त्र में अवश्य है; परन्तु आपको मन्त्र को आदर देना होगा। आपने अपनी तु्रचटयों ंके चलए मौत्मखक पश्चात्ताप भी चकया; चकनु्त चफर अपनी पुरानी गलचतयााँ कर बैठे, तो इस प्रकार बात नहीं ंबनेगी। गलती कर लेने पर आपको अपने-आपको दण्ड देना पडेगा-उस चदन उपवास करना पडेगा। खडे हो कर मन्त्र का पिास माला अचतररक्त िप करना

होगा। उस चदन िागरण करना पडेगा। अपने को आचथिक दण्ड भी देना पडेगा। आप इस आचथिक दण्ड से प्रिा धन को पुण्य के कायों में व्यय कर सकते हैं। यचद आप िीवन में वास्तचवक प्रगचत करना िाहते हैं, तो आपको अपने को ही दण्ड देना पडेगा।

आप भगवान् को धोखा नहीं ंदे सकते। यचद आप सिों चक मन्त्र के िप से मैं पचवत्र हो ही िाऊँगा, िीवन के पुराने ढरे को बदलने की आवश्यकता नहीं ंहै, तो यह चविार गलत है। ऐसा सिो कर आप अपने को ही धोखा देंगे। इसका पररणाम अच्छा नहीं ंहोगा। इष्टमन्त्र की दीक्षा ले लेना खेल नहीं ंहै। इसे साधारण भाव से नहीं ंलेना िाचहए। यह गम्भीर बात है। इसकी गम्भीरता को समझ करके, इसी मयािदा को रखते हुए हमें अपने िीवन को संयचमत तथा अनुशाचसत बनाना होगा।

मैं कह िुका हाँ चक मन्त्र-दीक्षा पुनिन्म है। इस पुनिन्म के बाद िीवन में सुखद पररवतिन का मागि प्रशस्त हो िाता है; परन्तु आपको पग-पग पर िागरूक रहना पडेगा, अन्यथा पुरानी आदतें आपको चफर पीछे की ओर धकेल देंगी। हृदय की चनष्कपटता साधक का सबसे बडा गुण है। भगवान् सविज्ञ हैं। इसचलए उनके सामने हमें चकसी प्रकार का छल नहीं ंकरना है। उनके सामने हमें चनष्कपट बने रहना है। हााँ, यचद आपमें कोई कमिोरी है, तो उससे मुत्मक्त पाने के चलए आपको भगवान् से ही प्राथिना करनी पडेगी। आप सचे् हृदय से उनसे चनवेदन करेंगे, तो भगवान् आपकी बात अवश्य ही सुनेंगे। भगवान् आपके सबसे अचधक चनकट हैं। प्राथिना करने पर वह तुरन्त उत्तर देते हैं।

और अन्त में, यह बात और। मन्त्र को भगवान् का रूप मान कर आप दीक्षा-मन्त्र को सदैव आदर देते रहें। इस मन्त्र का िप करते हुए आप तुरन्त ही अपने इष्टदेव के साचन्नध्य में आ िाते हैं-इस भाव को बनाये रखते हुए अचधकाचधक मन्त्र िप करें और मन्त्रदीक्षा-रूप इस नये िन्म में िीवन को भगवान् के स्मरण से पररपूररत रखें।

# ९. भगवान् की इच्छा

हम कहते हैं चक िो कुछ भी होता है, भगवान् की इच्छा से होता है। चबना उनकी इच्छा के पत्ता भी नहीं ंचहलता है। कभी-कभी हम सिोने लगते हैं चक यचद सब-कुछ करने वाला भगवान् ही है और पत्ता भी भगवान् की इच्छा के चबना नहीं ंचहलता है, तो हम पुरुषाथि क्यों ंकरें? बात यह है चक हमने भगवान् की इच्छा का अथि ठीक से नहीं ंसमझा है। यचद कोई हमें
आग्रह करके घूस दे दे, तो हम कहते हैं—यह तो भगवान् की इच्छा थी, इसचलए हमने घूस ले ली। हम शराब को देखते हैं। उसके अत्मस्तत्व में भी भगवान् की इच्छा को मानने लगते हैं और उसका सेवन करने लगते हैं। रामकृष्ण परमहंस एक कहानी सुनाया करते थे। एक गुरुिी थे। वह बहुधा कहा करते थे-"सब भगवान् की इच्छा है।" उनके चशष्य उनकी यह बात सुना करते थे।
एक चशष्य उनकी इस बात को गलत ढंग से ही समझता था।

एक बार वह चशष्य शहर गया। उधर से रािा का हाथी िला आ रहा था। वह हाथी चकसी कारण से बहुत क्रोध में था। इसचलए महावत बार-बार चिल्ला रहा था- “रास्ता छोडो, हटो,

हटो।" चशष्य ने सोिा-सब भगवान् की ही इच्छा है; िो वह िाहेंगे, वही होगा, मुझे हटने की क्या आवश्यकता है? तभी वह हाथी उसके सामने आ गया और उसे सूँड़ से पकड कर िमीन पर पटक चदया। घटना के यथाथि कारण से अवगत हो कर गुरुिी आये। उन्होंने समझाया- "यह ठीक है चक भगवान् की इच्छा से ही हाथी नारािा हो गया, भगवान् की ही इच्छा से हाथी तुम्हारे सामने आ गया। लेचकन यह बात भी ठीक ही है चक भगवान् की इच्छा से ही महावत ने चिल्ला-चिल्ला कर रास्ते से हटने के चलए कहा था। तुमने भगवान् की इच्छा को क्यों ंअनसुना कर चदया ?"

हमें भगवान् की इच्छा की धारणा को ठीक से समझ लेना िाचहए। हम यह सोिें चक भगवान् की इच्छा की बात चकसने की ? यह बात उन ऋचष-मुचनयों ंने की, चिन्होंने भगवान् का साक्षात्कार चकया और यह अनुभव चकया चक 'वही' अनन्तकोचट ब्रह्माण्ड को इस प्रकार पररिाचलत कर रहे हैं मानो चकसी त्मखलौने से खेल रहे हों।ं उन्हें यह बात स्पष्ट हो गयी चक भगवान् की इच्छा के अचतररक्त और चकसी का महत्त्व नहीं ंहै। सब-कुछ उन्हीं ंकी इच्छा से हो रहा है। मेरा साँस लेना भी भगवान् की इच्छा है। मेरा िीवन, मेरा अत्मस्तत्व भी भगवान् की इच्छा है। िब हमें भी उन ऋचष-मुचनयों ंकी तरह भगवान् की िीवन्त अनुभूचत हो िाये, तभी हमें भगवान् की इच्छा की बात करनी िाचहए, नहीं ंतो हमारी दशा उस चशष्य की तरह हो िायेगी।

बहुत ऊँिाई से अथवा पहाड की चकसी िोटी से नीिे देखने से खेत-िंगल-गड्ढे-सब एक-समान चदखायी पडते हैं। इसी प्रकार ब्रह्मानुभूचत के चशखर पर से सब-कुछ भगवान् की इच्छा से संिाचलत होता हुआ चदखलायी पडता है; परन्तु यचद हम सब भी उनकी तरह उन्हीं ंकी बात दोहराने लगेंगे, तो हम िीवन का गलत मागि पकड सकते हैं। सम्भव है चक हम यह सोिने लगें चक िब सब-कुछ भगवान् की ही इच्छा से हो रहा है, तो हम कतिव्य-कमि क्यों ंकरें। यह भी सम्भव है चक हम बुराई के होने में भी भगवान् की इच्छा के दशिन करके बुराई को ही अपनाने लगेंगे। इसका अथि यह हुआ चक चिन्होंने भगवान् की सत्ता का सिमुि अनुभव चकया है, वही भगवान् की इच्छा की बात कर सकते हैं।

भगवान् कृष्ण ने अपना चवश्व-रूप चदखा कर यह चसद्ध कर चदया चक सब-कुछ उन्हीं ंकी इच्छा से हो रहा है। चफर उन्होंने अिुिन को युद्ध करने के चलए प्रेररत चकया। भगवान् तो हमसे कमि करने के चलए कहते हैं और हम 'सब-कुछ भगवान् की इच्छा से होगा' -ऐसा सोि कर कतिव्य-कमि करने की ओर से मुँह मोड लेते हैं। भगवान् ने हमें बुत्मद्ध दी है, चविार करने की शत्मक्त दी है तथा मागि-दशिन प्राप्त करने के चलए धमिग्रन्थ तथा सन्त िन उपलब्ध कराये हैं। इसका अथि यह हुआ चक धमिग्रन्थों ंतथा सन्त िनों ंके मागि-चनदेशन में हमें स्वयं चनणिय ले कर कतिव्य-कमि करना है, सत्कायि करना है। अवश्य ही हमें यह भाव बनाये रखना िाचहए चक सभी पररत्मस्थचतयाँ भगवान् की इच्छा का प्रकटीकरण हैं और हमें स्वीकायि हैं। हमें दुःख चमले, लाभ चमले; हम स्वस्थ रहें, रोगी हो िायें; हमारी प्रशंसा की िाये, चनन्दा की िाये-सब-कुछ भगवान् की ही इच्छा से हो रहा है।

खूब सोि-समझ करके अपनी इच्छा के अनुसार हमें सत्कायों में, हरर-भिन में और गुरु-सेवा में लगना िाचहए। भगवान् से प्राथिना करनी िाचहए चक वह हमें सन्मागि में िलते रहने की प्रेरणा और शत्मक्त दें। वेदान्त-दशिन के अनुसार ज्ञान-प्रात्मि का प्रारम्भ शुभेच्छा से होता है। शुभेच्छा का अथि है-श्रवण, सम्पकि या स्वाध्याय के पररणाम-स्वरूप मन में ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा का उदय होना। यहाँ हमें इस बात का संकेत चमलता है चक िीव की इच्छा का भी महत्त्व है; क्योंचक यही इच्छा चफर पुरुषाथि को िन्म देती है।

ागिरूक साधक सदैव इस चवश्वास का सम्बल ले कर आगे बढ़ता है चक िो कुछ होता है, भगवान्कीइच्छासेऔरभगवान्केचकयेहोताहै।भगवान्प्रेमऔरकरुणाकेसागरऔर न्यायचप्रय हैं; अतः वह सदैव सबके चहत में ही कायि करते हैं। भगवान् की इच्छा को वह समपिण-भाव से स्वीकार करता है। दूसरी ओर वह हाथ पर हाथ रख कर भी नहीं ं बैठता। भगवान् की इच्छा से उसे पुरुषाथि करने की शत्मक्त चमली है, यह समझते हुए वह सन्तों,ं धमिग्रन्थों ं आचद से मागि-चनदेशन प्रा करते हुए अपने चववेक की सहायता से पुरुषाथि करने में भी चकसी से पीछे नहीं ं रहता। वह भगवान्-रूपी सम्राट् का सेवक होता है। वह इस सम्राट् की प्रत्येक इच्छा के प्रचत समचपित रहकरउनकीसेवाके रूपमेंपुरुषाथिकरताहै।

# १०. मकरसंक्रात्मन्त की चवशेषता

ऐसा माना िाता है चक सूयि भगवान् िो अभी तक बहुत दचक्षण में पहुँ गये थे, आि (मकरसंक्रात्मन्त) के चदन से उत्तर की ओर बढ़ने लग िाते हैं। आि से उत्तरायण का प्रारम्भ होता है। इसकी अवचध छह महीने है। उत्तरायण में ही समस्त शुभ कायि चकये िाते हैं। आि के चदन से प्रकाश बढ़ता िायेगा, चदन बढ़ता िायेगा तथा रात और अन्धकार कम होते िायेंगे। आपके िीवन में भी ऐसा होना िाचहए। अन्धकार िो है, कम होना िाचहए। अज्ञान का अन्धकार, अचवद्या का अन्धकार और नकारात्मक आसुरी सम्पदाओं ंका अन्धकार, अचविार तथा अचववेक का अन्धकार-ये सब समाि हो िाने िाचहए। चदन-प्रचत-चदन आपके िीवन में प्रकाश-चववेक का प्रकाश, चविार का प्रकाश, ज्ञान का प्रकाश, चवद्या का प्रकाश, दैवी सम्पदा का प्रकाश-का चवकास होते िाना िाचहए। आि से हमें यह संकल्प लेना है चक समस्त कतिव्य-कमि करते हुए और प्रारब्ध कमों को भोगते हुए अपने िीवन के शेष भाग में सदैव उत्तरायण की त्मस्थचत को बने ही रहने देंगे। अब हमारे िीवन में दचक्षणायन नहीं ंआने पायेगा। हम प्रकाश को घटने ही नहीं ंदेंगे, रात को बढ़ने ही नहीं ंदेंगे। रात को अच्छा नहीं ंमाना िाता है। इसे तमोगुणी माना िाता है। रात में आलस्य बढ़ िाता है, चनत्मियता बढ़ िाती है। साधना नहीं ंहो पाती। हम भिन से वंचित रह िाते हैं। रात में हम पाते नहीं,ं खोते हैं; क्योंचक हम भगवत्स्मरण से वंचित रह िाते हैं। यह ठीक है चक रात में चनिावस्था में सांसाररक प्रपंऔर चवषयों ंकी चवसूमृचत हो िाती है; परन्तु साथ ही भगवान् की भी चवसूमृचत हो िाती है।

चफर भी कुछ रातें ठीक हैं िैसे महाचशवराचत्र, िन्माष्टमी के चदन मध्यराचत्र तक का समय, वैकुण्ठ एकादशी की राचत्र। कारण यह चक इन रातों ंमें हम सोते नहीं ंहैं। रात होते हुए भी हम िागते रहते हैं। हम अपने अन्दर िागृचत के प्रकाश को बने रहने देते हैं। अन्धकार में हम अपने अन्दर अन्धकार नहीं ंबनने देते। हम अन्धकार में दीपक िला कर रखते हैं, िागते रहते हैं, कीतिन करते हैं, पूिा-पाठ करते हैं। ऐसा िो िागता (िाग्रत) रहता है, उसी का भिन बनता है। हम अपने पुरुषाथि से रात को चदन के बराबर बना लेते हैं। रात के अन्धकार को हम प्रकाशमय बना लेते हैं। अन्धकार को प्रकाशमय बनाने की क्षमता प्रत्येक िीवात्मा के अन्दर है।

राचत्र में िब सारा संसार सोता है, िागरूक (सावधान) साधक िागता रहता है। वह िानता है— मैं धरती पर चकस चलए आया हूँ? िीवन का क्या चमशन है? वह अपनी साधना में रत रहता है। ऐसा साधक संयमी, चववेकी और चविारशील बन कर सदैव िाग्रत रहता है।

इसी प्रकार का साधक बनने का चनणिय लेने का यह मकरसंक्रात्मन्त का शुभ मुहति है। अब हमें दचक्षणायन को भूल िाना है। हम संकल्प लें चक हमारे िीवन-भर उत्तरायण ही रहेगा। उसमें प्रचतचदन प्रकाश बढ़ता ही िायेगा। हम प्रकाश को कभी घटने नहीं देंगे। केवल प्रकाश-ही-प्रकाश रहेगा। अज्ञान के, अचवद्या के, अचविार के, गलत व्यवहार के अन्धकार को हम सदा के चलए समाि कर देंगे। ऐसा चनणिय लेने का यही समय है। मकरसंक्रात्मन्त यही मौन सन्देश हमें दे रही है।

चिस प्रकार अभी सूयि के प्रकाश की गचत में पररवतिन हो िाता है और सूयि उत्तर की चदशा में गचत करने लगता है, उसी प्रकार हम भी अपने िीवन की चदशा का पररवतिन करके उसे भगवतोन्मुखी बना देंगे। यही हमारा चनणिय है और इस प्रकार के चनणिय को अपने िीवन में कायात्मित करना ही आपका िीवन-लक्ष्य है। यही आपके िीवन का महामन्त्र है। उठो, िागो । अब सोना नहीं है। उद्यमी बन कर आगे बढ़ो और बढ़ते ही रहो। बढ़ते रहने और सचक्रय रहने से तमोगुण पास नहीं आ सकता। तमोगुण तब आक्रमण करता है, िब हम चनत्मिय बन िाते हैं। अन्धकार और रात चनत्मियता का प्रतीक है; क्योंचक रात में हम आगे नहीं बढ़ सकते हैं। रात चनत्मियता का समय है। रात में चलए आदमी सोया पडा रहता है। आगे नहीं बढ़ता है। इसचलए उठो, िागो और आगे बढ़ो। ज्ञान को प्राि करो। भगवान् क्या होता है? सदैव चनि का सच्चा स्वरूप क्या है?-उसकी अनुभूचत तथा ज्ञान प्राि करो। उस ज्ञान को प्राि करके अपने िीवन को उज्ज्वल और प्रकाशमय बनाओ। अपने-आपको प्रकाश का एक केंद्र बना दो। यह मकरसंक्रात्मन्त के उत्तरायण पुण्यकाल का मूक सन्देश है।

# पररचशष्ट १

## श्री स्वामी चिदानन्द

(िीवन-झाँकी)

श्री स्वामी चिदानन्द िी अपने पूविाश्रम में श्रीधर राव के नाम से ज्ञात थे। उनका िन्म २४ चसतम्बर १९१६ को हुआ। उनके चपता का नाम श्रीचनवास राव तथा माता का नाम सरोचिनी था।

उनके चपता एक समृद्ध िमीदार थे। वह दचक्षण भारत के कई ग्रामों,ं बडे-बडे भूचम-खण्डों ंतथा भव्य भवनों ंके स्वामी थे।

स्वामी िी एक मेधावी छात्र थे। प्राथचमक तथा माध्यचमक चशक्षा पूणि कर लेने के पश्चात् सन् १९३६ में उन्ोंनें लोयोला कालेि में प्रवेश चलया। इस चवद्यालय के िार केवल मेधावी छात्रों ंके चलए खुले हुए थे। सन् १९३८ में उन्ोंनें स्नातक-उपाचध प्रिा की। इस चवद्यालय में ईसाइयत का वातावरण था। इस वातावरण में व्यतीत हुआ उनका अध्ययन-काल उनके चलए महत्त्वपूणि चसद्ध हुआ। चहन्दू-संसृ्कचत के सवोत्तम तथा सवोतृ्कष्ट तत्त्वों ंके साथ समत्मित हो कर प्रभु यीशु, उनके पट्टचशष्यों ंतथा अन्य ईसाई सन्तों ंके िीवनादशों ने उनके हृदय में स्थान बना चलया। स्वामी िी के चलए बाइचबल का पाठ उनकी चदनचयाि का मात्र एक अंग नहीं ंथा; बाइचबल उनके चलए िीवन्त ईश्वर ही थी-वेदों,ं उपचनषदों ंतथा भगवद्गीता के उपदेशों ंके समान सिीव तथा वास्तचवक । अपने सहि, चवशाल दृचष्ट-के्षत्र के कारण वह कृष्ण में ही यीशु का दशिन (न चक कृष्ण के स्थान पर यीशु का दशिन) करने लगे। वह चितना चवषु्णु-भक्त थे, उतना ही यीशु-भक्त भी।

कुचष्ठयों ंकी सेवा उनका िीवनादशि बन गयी। अपने आवास के बडे-बडे लानों ंमें वह उनके चलए झोपचडयााँ बनवा देते थे और उनें देव-तुल्य समझ कर उनकी सेवा करते थे। कुछ समय तक स्वामी चशवानन्द िी के साथ पत्र-व्यवहार के माध्यम से सम्पकि रख कर वह सन् १९४३ में आश्रम-पररवार में सत्मम्मचलत हो गये।

यह स्वाभाचवक था चक अने्तवासी के रूप में उन्ोंनें सवि-प्रथम आश्रम के चशवानन्द ैररटेबल हात्मस्पटल का कायिभार साँभाला। उनके हाथ में रोग-हरण की चदव्य-क्षमता उत्पन्न हो गयी। इस कारण रोचगयों ंकी भीड बढ़ने लगी।

आश्रम में उनके आने के बाद िल्दी ही उनकी कुशाग्र बुत्मद्ध का पयाि पररचय चमलने लगा। वह भाषण देने लगे, पचत्रकाओं ंके चलए लेख चलखने लगे तथा दशिनाचथियों ंको उपदेशों ंसे लाभात्मित करने लगे। िब सन् १९४८ में योग-वेदान्त फारेस्ट यूचनवचसिटी (अब योग-वेदान्त फारेस्ट एकिोमी) की स्थापना हुई, तब पूज्य गुरुदेव ने उनें उसके कुलपचत तथा रियोग के प्रााचय के रूप में चनयुक्त करके उनें सविथोचित सम्मान प्रदान चकया। सन् १९४८ में परम पूज्य श्री स्वामी चशवानन्द िी महारि ने उनें चदव्य िीवन संघ के महासचिव के रूप में मनोनीत चकया। अब संस्था का महान् उत्तरदाचयत्व उनके कन्धों ंपर आ पडा।

गुरुपूचणिमा-चदवस, १० िुलाई १९४७ को परम पूज्य श्री स्वामी चशवानन्द िी महारि ने उनें संन्यास-परम्परा में दीचक्षत चकया। इसके बाद से वह 'स्वामी चिदानन्द' कहलाये। इस नाम का अथि है–ो सवोच् ितना तथा परमानन्द में संत्मस्थत हो।

गुरुदेव के व्यत्मक्तगत प्रचतचनचध के रूप में नयी दुचनया (अमरीका) में चदव्य िीवन का सने्देश प्रसाररत करने के उदे्देश्य से सन् १९५९ के नवम्बर माह में श्री स्वामी चिदानन्द िी वहााँ की यात्रा करने के चलए चनकल पडे। िििा १९६२ में वह वापस लौटे।

अगस्त १९६३ में, पूज्य गुरुदेव की महासमाचध के पश्चात्, वह चदव्य िीवन संघ के परमाध्यक्ष के रूप में िुने गये। इसके बाद वह चदव्य िीवन संघ के सुचवसृ्तत कायिके्षत्र में ही नहीं,ं

वरन् संसार-भर के अगचणत चिज्ञासुओं ंके हृदयों ंमें भी त्याग, सेवा, प्रेम तथा आध्यात्मत्मक आदशिवाद की पताका को ऊाँिा उठाये रखने के चलए प्रयत्नशील रहे।

सन् १९६८ में पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी चशवानन्द िी महारािा के चशष्यों ंतथा भक्तों ंके अनुरोध पर श्री स्वामी चिदानन्द िी ने संसार के अनेक देशों ंकी दोबारा यात्रा की।

श्री स्वामी चिदानन्द िी प्रारम्भ से ही श्री गुरुदेव के चमशन का कायि अथक रूप से कर रहे हैं तथा देश-चवदेश में चदव्य िीवन का सन्देश पहुाँिा रहे हैं। एक उत्कृष्ट संन्यासी के रूप में आध्यात्मत्मक िुम्बकत्व के गुण के धनी स्वामी िी अनचगनत व्यत्मक्तयों ंके चप्रयपात्र बन गये हैं तथा संसार-भर में चदव्य िीवन के महान् आदशों के पुनरुज्जीवन के चलए सभी चदशाओं ंमें कचठन पररश्रम कर रहे हैं।

# पररचशष्ट २

## चदव्य िीवन संघ के लक्ष्य तथा उद्देश्य

चदव्य िीवन संघ के लक्ष्य तथा उद्देश्य चनम्ांचकत हैं :

**१. सांस्कृचतक तथा आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार- प्रसार करना**

(क) प्रािीन, प्राच्य तथा पाश्चात्य दशिन और धमि को आधुचनक वैज्ञाचनक ढंग से प्रस्तुत करने वाली पुस्तकों,ं पुत्मस्तकाओं ंतथा पचत्रकाओं ंका प्रकाशन और प्रन्यास-मण्डल िारा अनुमोचदत शतों पर उनका चवतरण करके;

(ख) भगवन्नाम का प्रिार करके; मानव-कल्याण के चलए प्रविनों ंतथा आध्यात्मत्मक सभाओं ंका आयोिन करके और समय-समय पर सांस्कृचतक-आध्यात्मत्मक चमलन-कायिक्रमों ंका आयोिन करके;

(ग) नैचतक-आध्यात्मत्मक साधनाओं ंके चलए उपयुक्त वातावरण चनचमित करने; वास्तचवक संस्कृचत का पुनरुत्थान करने तथा पूिा, भत्मक्त, चववेक, सम्यक् कमि और उत्तर ध्यान के माध्यमों ंसे साधकों ंकी आत्मोन्नचत करने हेतु योगाभ्यास के प्रचशक्षण-केन्द्र (िहााँ आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा तथा ध्यान की व्यवत्मस्थत चशक्षा दी िा सके) स्थाचपत करके;

(घ) वे सारे कायि करके िो सामान्य रूप से मानवता के तथा चवशेष रूप से भारतवषि के नैचतक, आध्यात्मत्मक तथा सांस्कृचतक उत्थान में सहायक हैं।

**(२) शैक्षणिक संस्थाओ ंकी स्थापना करना तथा उन्हें संचाचलत करना (आधुणनक पद्धणत तथा सम्यक् मूलभूत णसद्धान्तो ंको आधार मानते हुए)**

अप्रत्यपिणीय (non-refundable) छात्रवृचत्तयााँ देने हेतु; दशिन एवं तुलनात्मकधमिकी चवचभन्न शाखाओं ंमें शोध-कायि करने के चलए उन्ें सहायता देने हेतु तथा अत्यन्त प्रभावीढंगसे आध्यात्मत्मकज्ञान के प्रिार-प्रसार की चवचधयों ंमें उन्ें प्रचशचक्षत करने हेतु ।

## ३ . सुपात्र अनाथो ंिंथाणनराश्रयो ंको सहायिा प्रदान करना

प्रन्यास-मण्डल िारा अनुमोचदतढंग सेअलग-अलग व्यत्मक्तयों ंको अथवा चकसी चवचशष्ट वगि के व्यत्मक्तयों ंके चहत में कायि करके।

## ४ . णचणकत्सा-सांस्थाओ ंकी स्थापना करना िथा उन्हें सांचाणि करना

प्रन्यास-मण्डल िारा अनुमोचदत ढंग से िनसाधारण- चवशेषकर चनधिन-वगि के व्यत्मक्तयों–ंके चलए रोग-चिचकत्सा, औषचध-चवतरण तथा शल्य-चिचकत्सा आचद का प्रबन्ध करने हेतु चिचकत्सा-संस्थानों ंतथा औषधालयों ंकी स्थापना तथा संिालन से सम्बत्मन्धत प्रबन्ध-भार वहन करके।

## ५ . समय-समय पर अन्य कायय करना

सामान्यतः संसार-भर में तथा चवशेषतः भारतवषि में प्रभावी ढंग से नैचतक तथा आध्यात्मत्मक पुनरुद्धार करने हेतु उपयुक्त कायिक्रमों ंका संिालन करके।